THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL
LIBRARY
OU_180229
UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H891 V46K. Accession No. G. H. 3164

Author वेंकटेश्वरराव, का. & लक्ष्मीकान्तम, पिं.

Title कवि-त्रीमाला : तेलुगु १९५२

This book should be returned on or before the date last marked below.

कवि-श्री माला

* तेलुगु *

कवि :

काटूरि वेंकटेश्वरराव

और

पिंगलि लक्ष्मीकान्तम

सम्पादक–अनुवादक

भीमसेन 'निर्मल'

(प्रा. भण्डारम भीमसेन जोस्युलु)

"भारत सरकार की ओर से भेंट"

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

प्रकाशक :

मोहनलाल भट्ट

मन्त्री :

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति,

हिन्दीनगर, वर्धा

● ● ●

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण—३०००

मई, १९६२

मूल्य—रु. २/—

● ● ●

मुद्रक :

मोहनलाल भट्ट

राष्ट्रभाषा प्रेस,

हिन्दीनगर, वर्धा

● ● ●

आमुख

हर्षका विषय है कि राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा अपने कार्य कालके २५ वर्ष सन् १९६१ में पूरे कर रही है। इस उपलक्ष्यमें मनाये जानेवाले रजत-जयन्ती महोत्सवके अवसर पर सभी भारतीय भाषाओंके मान्य कवियोंका तथा उनके उत्कृष्ट काव्यका परिचय 'कवि-श्री माला' की पच्चीस पुस्तकोंमें हिन्दी-गद्यानुवाद सहित प्रकाशित करनेकी योजनाके अन्तर्गत प्रस्तुत ग्रन्थ पाठकोंके समक्ष आ रहा है।

यद्यपि किसी भी भाषाके सर्वश्रेष्ठ काव्य-सर्जकका निश्चय करना एक कठिन कार्य है, फिर भी अपनी सीमाओंको ध्यानमें रखते हुए गण्यमान्य उन-उन भाषाओंके विद्वानोंकी रायसे ही चुनावका कार्य सम्पन्न किया गया है।

प्रत्येक पुस्तकके आरम्भमें जिस भाषाके कविकी रचनाओंका चयन किया गया है, उस भाषाके साहित्यका परिचय और कवि विशेषका परिचय दिया गया है। जिस भाषाके दो कवियोंका चुनाव किया गया है, उनका चुनाव करते समय सन् १९२० से पूर्वका साहित्य और १९२० से बादका साहित्य--इस तरहसे एक विभाजन-रेखा ध्यानमें रखी गई है। इसका कारण यह है कि लगभग सन् १९२० के पूर्वके तथा १९२० के बादके साहित्यमें प्रवाहित विचार-धारामें एक विशेष प्रकारका अलगाव-सा पाया जाता है।

श्री भीमसेनजी 'निर्मल'ने प्रस्तुत पुस्तकमें संकलित साहित्यको चुनने, काव्यांशको सम्पादित तथा अनूदित कर सारी सामग्रीको इस रूपमें प्रस्तुत करनेमें सहयोग दिया है। पुस्तकमें संकलित चित्र कविश्री काटूरि वेंकटेश्वररावजीके सद्प्रयत्नोंसे उपलब्ध हुआ है। संग्रहकी आवरण डिजाइनको बनवा देनेमें श्री व्ही. एन. अडारकरजी (डीन, सर जे. जे. इन्स्टीटयूट आफ अप्लाईड आर्ट, बम्बई) का उदार सहयोग मिला है, उसके लिए समिति सभीकी आभारी है।

इसके अतिरिक्त छपाई तथा अन्यान्य दृष्टियोंसे जिन-जिनका प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सहयोग मिला है, उनके प्रति भी समिति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती है।

आशा है, प्रस्तुत संग्रह पाठकोंको रुचिकर एवं उपयोगी प्रतीत होगा।

मन्त्री,

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

अनुक्रमणिका

पृष्ठांक

तेलुगु-साहित्य-परिचय [सन् १९२० से आज तक] १

कवि-परिचय २७

काव्य-सञ्चय ४३

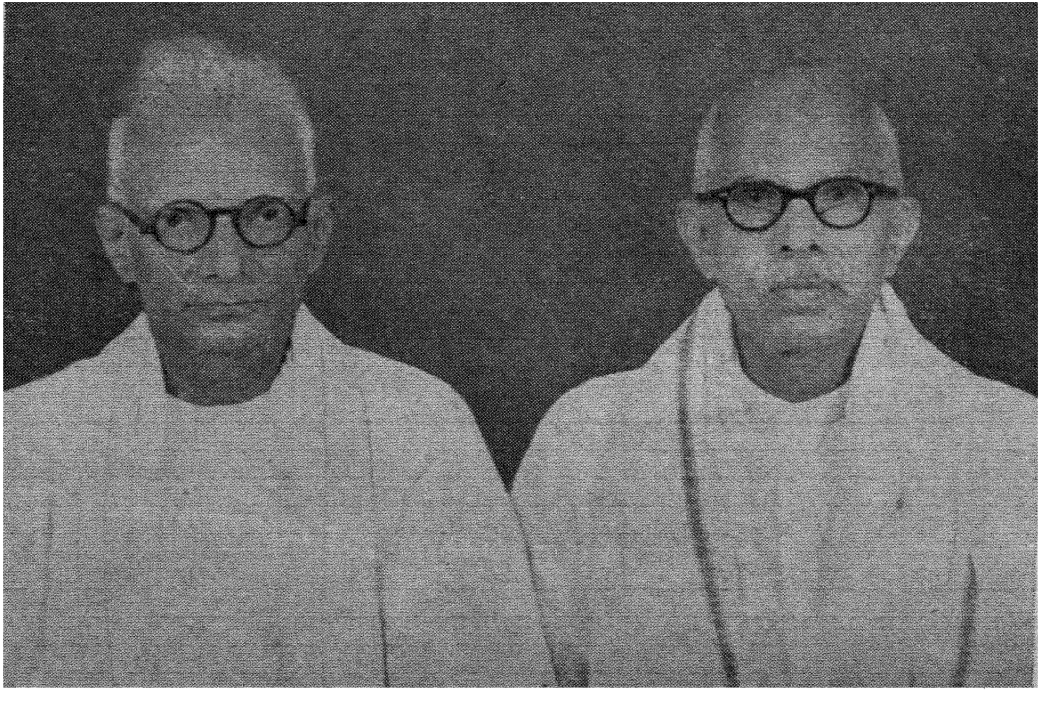

पिंगलि लक्ष्मीकान्तम और काटूरि वेंकटेश्वरराव

तेलुगु साहित्य परिचय

[सन् १९२० से आजतक]

तेलुगु भाषा
और
उसका साहित्य

• • •

[प्रारम्भसे सन् १९२० तकका तेलुगु साहित्यका संक्षिप्त परिचय कवि-श्री-माला—तिरुपति-वेंकट कवुलुमें दिया गया है।]

अन्य भारतीय भाषाओंके साहित्योंकी भाँति ही तेलुगुका लिखित साहित्य ११ वीं शतीसे प्रारम्भ होता है। ११ वीं शतीसे पूर्वकी तेलुगु भाषाके स्वरूपका परिचय मात्र देनेवाले साधन कुछ शिलालेख और लोक-गीत हैं।

अध्ययनकी सुविधाके लिअे तेलुगु साहित्यको छह युगोंमें विभाजित किया जाता है। (१) अज्ञातयुग या प्राङ्नन्नय युग (२) पुराण युग या अनुवाद युग (३) श्रीनाथ-युग या काव्य-युग (४) प्रबन्ध-युग (५) दक्षिण-युग और (६) आधुनिक युग। यह विभाजन, कालके अनुसार या विशिष्ट काव्यशैलियोंके आधारपर किया गया है। आधुनिक युगीन प्रवृत्तियोंका सम्यक् ज्ञान प्राप्त करनेके लिए, पूर्वके पाँच युगोंका संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर लेना आवश्यक है।

प्राङ्नन्नय युग :

आदि कवि नन्नय भट्टसे पूर्वकी तेलुगु भाषा और उसके साहित्यके स्वरूपका निर्णय करनेके लिए, उस युगके प्राप्त शिलालेख ही प्रधान साधन हैं। ये शिलालेख भी भाषा और देशी छन्दोंके स्वरूपका ज्ञान ही कराते हैं, साहित्यका कम। इस युगकी उपलब्ध सामग्री, भाषा-विज्ञानके क्षेत्रकी है। विषय-प्रधान शिलालेख और संदिग्ध लोकगीत, साहित्यके इतिहासमें विशेष योग नहीं देते।

पुराण-युग (ई. स. १०३० से ई. १४०० तक) :

इस युगमें वैदिक-धर्म-निष्णात महाराजाओंके प्रोत्साहनसे धर्म-निष्ठ कवियोंने महाभारत और रामायण आदि काव्यों और कुछ पुराणोंका, भाषामें अनुवाद प्रस्तुत किया है। पर ये अनुवाद केवल अनुवाद-मात्र न होकर स्वतन्त्र-मौलिक काव्योंके रूपमें प्रतिभासित होते हैं।

राजमहेन्द्रीके पूर्व-चालुक्य वंशीय राजा राज-राजनरेन्द्र (१०१२–१०६३) की सभामें नन्नय भट्ट नामक एक विद्वान थे। नन्नयने वैदिक-धर्म प्रचारके लिअे, पञ्चम वेद 'महाभारत' के अनुवाद के कार्यभारको सँभाला। अपनी पूर्ववर्ती भाषा एवं काव्य-रचना-शैलीको सुव्यवस्थित रूप देकर आपने 'आन्ध्र-वागनुशासक' की अपनी उपाधिको सार्थक बनाया। अपने प्रभु और मित्र राजराजकी प्रेरणासे वे महाभारतके ढाई पर्व तक की रचना कर पाए थे कि कालपुरुषने इनकी लेखनीको रोक दिया।

राजराजनरेन्द्रकी मृत्युके बाद देशकी राजनैतिक और धार्मिक परिस्थितियोंके कारण 'महाभारत' की पूर्तिका कार्य रुका-सा रहा। नन्नयके लगभग डेढ़ सौ साल बाद कविब्रह्मा तिक्कन्नाने (१२१०–१२९०) विराटपर्वसे लेकर शेष १५ पर्वोंकी रचना की। तिक्कन्ना नेल्लूरके राजा मनुमसिद्धिके मन्त्री तथा राजकवि थे।

अरण्यपर्वके शेष भागकी पूर्ति नन्नयके नामपर ही करनेवाले हैं एर्राप्रगड (१२८०–१३५०)। इन्होंने नन्नयकी शैलीपर रचनाका प्रारम्भ करके उसे तिक्कन्नाकी शैलीपर ला खड़ा किया, मानों वह नन्नय और तिक्कन्नाकी रचनाओंको मिलानेवाला सन्धि–सूत्र हो।

नन्नय, तिक्कन्न और एर्रन्नको 'कवित्रय' कहते हैं। इन तीनों महा-कवियोंने अनुवादको औचित्यकी दृष्टिसे घटा-बढ़ाकर, मौलिक काव्यके रूपमें प्रस्तुत किया है। अनुवादकी यही शैली, परवर्ती कवियोंके लिए आदर्श बनी रही।

इस युगके अन्य कवियोंमें केतन, मारन्न, गोन बुद्दारेड्डी, भास्कर, पेद्दन्न, नाचन सोमनाथ आदि प्रमुख हैं।

ईसाकी १२ वीं शतीमें कर्नाटक प्रान्तमें बसवेश्वर द्वारा संस्थापित 'वीर-शैव' संप्रदायने आन्ध्र प्रदेशको खूब प्रभावित किया था। उन सिद्धान्तोंके प्रचारके लिए अनेक कवियोंने कलम उठाई। देशी इतिवृत्त, देशी छन्द और देशी भाषाको साधन बनाकर, वीरशैव कवियोंने जनतामें जागरणके भाव फैलाए। इन कवियोंने भाषा और भावमें अत्यधिक स्वच्छन्दता दिखाई है। इन शैव कवियोंमें राजकवि 'नन्नेचोड' सर्वप्रथम हैं। इन्होंने 'कुमार सम्भवमु' नामक उत्तम काव्यकी रचना की। मल्लिकार्जुन पण्डिताराध्यके लिखे अनेक शैव-काव्योंमें एक 'शिवतत्त्वसारम' ही उप-लब्ध है। इसे तेलुगुका पहला शतक माना जाता है। द्विपद (देशी छन्द विशेष) रचनामें अनन्य और शिवकविसमूहके शिरोमणि पाल्कुरिकि सोमनाथने तेलुगु,

संस्कृत और कन्नड़ भाषाओंमें अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। 'बसव-पुराणमु', 'पण्डिताराध्य चरित्रमु', 'सोमनाथस्तवमु', 'अनुभवसारमु', 'वृषाधिपशतकमु' और 'बसवोदाहरणमु' अपेक्षाकृत प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

इस युगमें ही—जिसे प्रारम्भिक (आदि) युग कहा जाता है—मार्ग-कविता और देशी कविताके ऐसे उत्कृष्ट उदाहरण मिलते हैं कि इस युगके साहित्यको प्रारम्भिक दशाका साहित्य नहीं माना जा सकता। पुराण, विपुल काव्य, काव्य-प्रबन्ध, द्विपद, शतक और गद्यकविता इन षडविध कविता-शैलियोंकी नींव भी इसी युगमें पड़ी। एकाध देशी रचनाको छोड़, सभी अनुवाद ही हैं पर ये अनुवाद नीरस न होकर, मौलिक रचनाओंसे लगते हैं। कवियोंकी अनुपम प्रतिभा और व्युत्पत्ति ही इसका प्रधान कारण है। गोदावरी तीरस्थ राजमहेन्द्रीमें उद्भूत तेलुगु कविताका स्रोत नेल्लूरु, वरंगल, अद्दंकि आदि स्थानोंमें फैल पड़ा और समग्र आन्ध्र प्रान्तको अपनी निर्मल धाराओंसे तृप्त करने लगा।

काव्य-युग (ई. १४००—१५०० तक)

१५ वीं शतीके आन्ध्र साहित्याकाशके जाज्वल्यमान सूर्य है कवि-सार्वभौम श्रीनाथ और भक्तिमाधुर्यकी शीतल ज्योत्स्ना बिखेरनेवाले सुधाकर हैं महाकवि पोतन्ना। दोनों महाकवियोंने अपनी रचनाओंसे 'प्रबन्ध युग' के बीज बोए। अतः इसे 'प्रबन्धपूर्व युग' और कुछ मौलिक कथाकाव्योंकी रचना होनेसे इस युगको 'काव्य-युग' भी कहते हैं।

श्रीनाथकी रचनाओंमें 'शृंगार नैषधमु', 'भीमखण्ड', 'काशी खण्ड', 'हर-विलास', 'क्रीडाभिराममु', 'पल्नाटि वीरचरित्रमु' ही प्राप्त है। स्वच्छन्द प्रकृतिके इस महाकविने अपनी सभी रचनाओंमें तथा अनुवादोंमें भी अप्रतिम प्रतिभा दिखाई है। पाण्डित्यपूर्ण प्रौढ़ शैलीके साथ-साथ सरल देशी रचनामें भी श्रीनाथ कवि सिद्ध-हस्त है। इस महाकविने आन्ध्र प्रदेशके प्रत्येक राजदरबारमें अनन्य गौरवको प्राप्तकर रेड्डीराजाओंसे कनकाभिषेक करवा लिया। तेलुगु साहित्यके इतिहासमें इतना विलासी और वैभवशाली कवि दूसरा नहीं है।

महाभक्त और महाकवि बम्मेर पोतन्ना श्रीनाथके समसामयिक ही नहीं, रिश्तेमें साले माने जाते हैं। संस्कृतमें २० हजार ग्रन्थोंमें परिव्याप्त महाभागवत पुराणको पोतन्नाने ३० हजार पद्योंके महाकाव्यके रूपमें सम्पन्न बनाया है और उसे श्रीरामचन्द्रजीके चरणकमलोंमें समर्पित किया है। 'आन्ध्र महाभागवत' भक्ति और माधुर्यका आकर है। साहित्यिक महत्वके साथ-साथ लोकप्रियतामें भी इस काव्यका सानी नहीं है।

इस युगके अन्य प्रसिद्ध कवियोंमें पिल्ललमर्रि पिनवीरभद्र, जक्कन, अनन्तामात्य, गौरन, मडिकि सिंगन, गोपराजु, सूरन, नारायण कवि आदि उल्लेखनीय हैं।

नन्दि मल्लय और घण्ट सिंगन आन्ध्रका सर्वप्रथम वह कवि युग्म है जिसने 'प्रबोध चन्द्रोदयमु' और 'वराह पुराणमु' की रचना की। संकीर्तनोंमें–गेय पदोंमें–भगवान वेंकटेश्वरका स्तवन करनेवाले ताल्लपाक अन्नमाचार्य भी इसी युगमें हुए। आन्ध्रके कबीर वेमन्नाने अत्यन्त सरल और सुबोध शब्दोंमें समाजमें फैली रूढ़िवादिताका खण्डन करके सच्ची मानवताका उपदेश दिया था।

आन्ध्र साहित्यके इतिहासमें काव्य-प्रक्रियाओंके वैविध्यके लिअे इस युगका विशिष्ट स्थान है। नन्नय-युगमें जिन कविता-शैलियोंकी नींव पड़ी थी, उनका पूर्ण विकास इस समय परिलक्षित होता है। इस युगकी अधिकांश रचनाएँ अनुवाद हीं हैं, पर ये सभी अनुवाद कथा-संविधानकी अपेक्षा रचना-कौशल और शैलीकी प्रधानताके कारण मौलिक-काव्यका-सा आनन्द देते हैं। उन सभी रचनाओंमें कवियोंने श्रृंगारिक प्रसंगोंका विस्तारसे वर्णन किया है। इस समयकी विलक्षण प्रवृत्ति संस्कृत नाटकोंका भी काव्यमय अनुवाद करनेकी है। कुछ कवियोंने लक्षणग्रन्थोंकी भी रचना की है।

इस युगमें राजमहेन्द्री, अद्दंकि, विद्यानगर, ओरुगल्लु, कोण्डवीडु आदि नगर कविता-कन्याके क्रीड़ा-स्थल बने रहे।

प्रबन्ध-युग (ई. १५००–१७०० तक):

प्रबन्धयुग आन्ध्र साहित्यका स्वर्ण युग है। इस समय काव्यकलाका चरमोत्-कर्ष हुआ। ख्यात वृत्त और कल्पित वृत्तोंको लेकर अष्टादश वर्णनोंसे युक्त अनेक मौलिक काव्योंकी रचना की गई तथा बहुमुखी तथा परमोज्ज्वल साहित्यिक कृतियोंसे सम्पन्न इसी युगमें तेलुगुके पञ्चमहाकाव्योंकी भी सृष्टि हुई।

विजयनगरके महाराजा श्रीकृष्णदेवरायकी 'भुवन विजय' नामक सभा, आन्ध्र साहित्यके प्रसिद्ध कवियोंसे शोभायमान थी। श्रीकृष्णदेवराय स्वयं कवि और महान् पण्डित थे। इन्होंने तेलुगुमें 'आमुक्तमाल्यदा' नामक महाकाव्यकी रचना की। इसमें गोदा देवी या आण्डालके भगवान विष्णुके साथ हुए विवाहकी कथा वर्णित है।

आन्ध्र-प्रबन्ध-कविताके पितामह कहलानेवाले अल्लसानि पेद्दन्ने, 'मनु-चरित्र' या 'स्वारोचिष मनुसम्भवमु' नामक श्रेष्ठ प्रबन्धकाव्यकी रचना की। श्रृंगाररस प्रधान यह काव्य चरित्र-चित्रण, प्रकृतिके मनमोहक वर्णन, शब्द-चयन आदिमें अपना सानी नहीं रखता।

भुवन विजयके आठ प्रसिद्ध कवियोंमें अष्टदिग्गजों–मल्लन, नन्दितिम्मन्न, धूर्जटि, नृसिंह कवि, रामभद्र कवि तथा रामकृष्ण कवि मुख्य हैं।

तेलुगु साहित्यकी प्रथम कवयित्री आत्मकूरि मोल्ल इसी युगमें हुई थीं। उन्होंने प्रौढ़ शैलीमें रामायणकी रचना की। इस युगमें ऐतिहासिक महत्वके कुछ और काव्य भी लिखे गए।

विजयनगरके पतनके बाद दक्कनके बहमनी राजवंशके मुसलमान बादशाहोंने तेलुगु साहित्यकी श्रीवृद्धिमें प्रशंसनीय सेवा की है। उपलब्ध यक्षगानोंमें सर्व-

प्रथम 'सुग्रीव विजयमु' की रचना करनेवाले कन्दुकूरि रुद्रकविको इब्राहीम कुतुब शाहने 'चिन्तलपालेमु' नामक गाँव देकर सम्मानित किया था। पोन्निकण्टि तेलगन्नका 'ययातिचरितमु' ठेठ तेलुगुमें, तत्सम और तद्भव शब्दोंको छोड़कर, लिखा गया प्रथम काव्य है।

रायलु युगमें तेलुगु कविताका चरम-विकास हुआ। इस युगके अधिकांश कवियोंने अनुवाद करना छोड़कर, पुराणोंके किसी प्रसंगके आधारपर, स्वतन्त्र मौलिक काव्योंकी रचना की। इन प्रबन्ध-काव्योंमें प्रधानता शृंगार-रसकी रही। अष्टादश वर्णनोंसे युक्त इन काव्योंमें कवियोंकी कल्पना-चातुर्यके ज्वलन्त उदाहरण मिलते हैं। इस युगमें पाण्डित्य-प्रदर्शन एक गुण माना जाने लगा। श्लिष्ट काव्यों, द्वयर्थि और त्र्यर्थि-काव्योंकी बाढ़-सी आगई। ठेठ-तेलुगु में भी काव्य लिखे जाने लगे। इस युगका उल्लेखनीय विषय मुसलमान राजाओंकी आन्ध्र साहित्यकी सेवा है।

इस युगमें कविताके क्रीड़ास्थल बने हुए थे—विद्यानगर (विजयनगर), गोलकुण्डा, मधुरा, चन्द्रगिरि आदि।

दक्षिण आन्ध्र-युग (ई. १७००—१८७५ तक) :

आन्ध्र सरस्वतीका विहार-क्षेत्र अब दक्षिणके तंजाऊर, मधुरा, मैसूर आदि स्थानोंमें रहा। उन राज्योंके शासकोंने जो विजयनगर-साम्राज्यके सामन्त तेलुगु नायक थे, स्वयं काव्य रचनाकी और कई कवि-पण्डितोंको आश्रय देकर उनसे कई सुन्दर काव्योंकी रचना करवाई। यही कारण है कि इस युगको दक्षिणान्ध्र युग कहते हैं। भाषा-प्रयोगमें स्वच्छन्दता, हदसे बढ़कर शृंगार (अश्लीलता) का वर्णन, और मौलिक कल्पना-शक्तिके अभावके कारण, कुछ विद्वान् इस युगको क्षीण-युग या ह्रास -युग भी कहते है। पर रचनाओंकी संख्या और वैविध्यके कारण इस कथनमें सत्यका अंश कम दिखाई पड़ता है।

तञ्जाऊरके रघुनाथ भूपाल और उनके पुत्र विजयराघवके समयमें तेलुगुके कई प्रसिद्ध काव्योंका निर्माण हुआ। कालक्रममें तञ्जाऊर मरहठोंके अधिकारमें चला गया। इन महाराष्ट्र राजाओंने तेलुगु साहित्यकी अनुपम सेवा की है। शहाजी महाराजके लिखे दो हिन्दी यक्षगानोंका भी इधर पता चला है।

भक्तिकी अनन्य मधुरिमासे पूर्ण अनेक कृतियों (कीर्तनों) की रचना करनेवाले त्यागय्या, मधुर भक्तिसे पूर्ण पदोंकी रचना करनेवाले क्षेत्रय्या इसी युगके महान् कलाकार हैं। त्यागय्याकी कृतियोंमें संगीत और साहित्यका गंगा जमुनी प्रवाह है तो क्षेत्रय्याके पदोंमें संगीत, साहित्य और अभिनेयताकी त्रिवेणी प्रवाहित है।

रायलु युगमें शृंगार रसका जो प्रवाह उमड़ पड़ा उस रसकी धाराओंसे यह सारा युग ही आप्लावित रहा। यह प्रवृत्ति अश्लील शृंगारकी ओर अधिक झुकी हुई थी। जीवनमें जो निष्क्रियता और विलासिता फैल पड़ी थी, उसीका प्रतिबिम्ब इन शृंगार-काव्योंमें देखनेको मिलता है। काव्यरचनामें हृदय-पक्षकी अपेक्षा

बुद्धि-पक्षका ही विशेष जोर रहा। अतः काव्योंमें भाव-पक्षकी अपेक्षा कला-पक्षकी ही प्रधानता दृष्टिगोचर होती है। पाण्डित्य-प्रदर्शन ही रचनाका एकमात्र लक्ष्य रह गया। आशु-कविता और समस्यापूर्ति राजसभाओंमें सम्मान प्राप्त करनेके साधन बने रहे।

प्राचीन तेलुगु कविता प्रबन्ध-प्रधान होती थी। कई वर्षोंकी सतत साधनाके बाद ही कविगण ग्रन्थोंके निर्माणमें सफल होते थे। कविता राजाश्रित होती थी और समासयुक्त, संस्कृतपद बहुला भाषाका प्रयोग करना गौरवका विषय माना जाता था। रायलु युग तक आते-आते कविताकी चरमोन्नति हुई। वह युग सचमुच आन्ध्र साहित्यका 'स्वर्णयुग' है। तदुपरान्त काव्यकी गति मानों रुक-सी गई। नवीनता एवं भौतिकता बिलकुल ओझल-सी हो गई। कविगण अपने पूर्ववर्ती कवियोंकी रचनाओंका अनुसरण-अनुकरण मात्र कर सन्तोषकी साँस लेते। रचना-चमत्कार, अलंकारोंकी प्रचुरता आदि काव्यके कला-पक्षपर ही अधिक ध्यान दिया जाने लगा। आधुनिक कालमें इन प्राचीन सम्प्रदायों एवं परम्पराओंमें सम्पूर्ण क्रान्ति हुई।

आधुनिक-युग (१८७५ से .....) :

सन् सत्तावनका स्वतन्त्रताका युद्ध भारतीय साहित्यमें नव जागरणका सन्देश लाया। पाश्चात्य सभ्यताकी चकाचौंधसे मुँह फेरकर भारतीय जन स्वदेश और स्वभाषाकी ओर ध्यान देने लगे। समग्र राष्ट्रमें उद्‌बुद्ध यह नवीन चेतना राज नैतिक, धार्मिक, सामाजिक और साहित्यिक क्षेत्रोंमें अभिव्यक्त होने लगी। राज-नैतिक क्षेत्रमें यह कांग्रेसके रूपमें, धार्मिक क्षेत्रमें आर्य समाज, सामाजिक क्षेत्रमें ब्राह्म समाज आदिके रूपमें सुव्यक्त हुई। विचारोंकी अभिव्यक्तिका साधन साहित्य ही है, अतः नव जागरणका सुष्ठु प्रभाव, देशके प्रत्येक प्रान्तकी भाषा तथा साहित्य पर परिलक्षित होता है। 'भाव वही है, भाषाकी पोशाक भिन्न है।' आधुनिक युगकी सभी प्रवृत्तियोंका सम्यक् प्रभाव, तेलुगु साहित्यपर पड़ा है।

तेलुगुके आधुनिक साहित्यसे परिचय प्राप्त करनेके पहले, दो अँग्रेज महानु-भावोंके नामोंका उल्लेख होना चाहिए, जिनका आन्ध्र चिर-ऋणी हैं। सर सी. पी. ब्राउन महाशयने अथक परिश्रम कर, तेलुगुकी अनेक अप्रकाशित एवं जीर्णप्राय पुस्तकोंका पुनरुद्धार किया। उन्होंने तेलुगुका एक व्याकरण बनाया और अँग्रेजी-तेलुगु, तेलुगु-अँग्रेजी शब्दकोश बनाए। दूसरे महानुभाव हैं कर्नल कालिन मेकञ्जी, जिन्होंने गाँव-गाँव घूमकर प्राचीन पुस्तकोंका उद्धार किया, लुप्त इतिहास पर प्रकाश डाला और लुप्तनामा कवियोंकी रचनाओंको प्रकाशित किया।

आधुनिक युगके प्रारम्भमें चिन्नयसूरि, (१८०९–६२) नामक पण्डितने 'बाल-व्याकरण' की रचना की, जो इस भाषाका मान्य व्याकरण माना जाता है।

अब क्रमसे तेलुगुके आधुनिक साहित्यके विभिन्न अंगोंका संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है।

कविता :

तेलुगु साहित्यके आधुनिक युगको दो भागोंमें बाँटा जा सकता है। आरम्भिक युग (१८५० से १९०० तक) और नवीन युग (१९०० से अब तक) इस नवीन युगको भी दो भागोंमें बाँटा जा सकता है, नवीन और नवीनतम। हम इन्हें तीन कालोंमें व्यक्त करेंगे। ये हैं: प्रथम, द्वितीय और तृतीय उत्थान-काल।

श्री कन्दुकूरि वीरेशलिंगम पन्तुलु, श्री गुरजाडा अप्पारावजी और श्री गिडुगु राममूर्ति प्रथम उत्थानकालकी त्रिमूर्ति हैं।

श्री वीरेशलिंगम नवयुग-निर्माताके नामसे प्रख्यात है। वे मुख्य रूपसे समाज-सुधारक हैं। अपनी सुधारवादी विचारधाराको सामान्य जनता तक पहुँचानेके लिए उन्होंने कलमका आश्रय लिया। इस कार्यके लिए उन्होंने जन-सामान्यकी बोलीका ही उपयोग किया। इस व्यावहारिक बोलीमें उन्होंने तेलुगुके प्रथम उपन्यास, प्रथम नाटक एवं प्रथम लघु काव्यकी रचना की। इन्हें तेलुगुके नवीन साहित्यका पिता कहा जाए तो कोई अत्युक्ति न होगी। हिन्दी साहित्यमें जो स्थान भारतेन्दुको दिया जाता है, वही स्थान तेलुगुमें आपका है। इनका समय १८४८ से १९१९ तक है।

पन्तुलुजीसे प्रभावित होकर साहित्य-क्षेत्रमें पदार्पण करनेवालोंमें श्री गुरजाडा अप्पाराव मुख्य हैं। समाज-सुधार और राष्ट्रीय भावनाओंको व्यावहारिक भाषामें काव्य-रूप देनेवालोंमें आपका स्थान सर्वप्रथम है।

मिट्टी नहीं देशके माने,
देश है वहाँ की जनता ही।
+ + +
मत कह कि मुझे देशका प्रेम है,
करके दिखा,लोगोंकी भलाई कोई।
+ + +
अच्छाई 'माला' (शुद्र) है,
बनूंगा तो मैं भी वही।

ये कुछ इनके प्रसिद्ध गेय पद हैं। इन पदोंसे प्रदेशका कोना-कोना गूँजा करता था। इनके पद 'मुत्यालसरालु' एवं 'नीलगिरी पाटलु' में संगृहीत हैं। 'कन्या-शुल्कम्' नामक नाटक इनकी कीर्तिका प्रकाश-स्तम्भ है, जिसमें इन्होंने तत्कालीन समाजपर चुभता व्यंग किया है। इनकी भाषा व्यावहारिक है जिसमें प्रयास नाम मात्रको भी नहीं है। इनका समय १८६१ से १९१५ तक है।

पण्डितोंके हाथोंमें पड़कर कृत्रिम बनी हुई भाषाको, उन बन्धनोंसे मुक्त कर, जन-सामान्यके सामने लानेका श्रेय श्री गिडुगु राममूर्ति पन्तुलुको है। इनकी रचनाओंका इतना महत्व नहीं है जितना कि व्यावहारिक भाषाके आन्दोलनका।

इन्होंने सवरों (उड़ियाकी एक जाति) के लिए लिपि, व्याकरण और कोशका निर्माण किया। इनका समय १८६३ से १९४० तक है।

इस युगमें 'आन्ध्र-पत्रिका' तथा 'भारती' के संस्थापक श्री काशीनाथुनि नागेश्वररावका भी विशिष्ट स्थान है। 'अमृताञ्जन' की आमदनीको इन्होंने इधर साहित्यिक और राजनैतिक क्षेत्रमें व्यय किया।

इस प्रकार प्रारम्भिक युग, सच्चे अर्थोंमें तैयारीका युग था नवचेतना एवं नवजागृतिका युग था, जिसकी गोदमें पलकर एवं परिपुष्ट होकर नवीन युग सामने आया।

नवीन युगको हम तीन कालोंमें विभाजित कर सकते हैं। प्रथम उत्थान-काल १९०० से १९२० तक, द्वितीय उत्थान-काल १९२० से १९४० तक और तृतीय उत्थान-काल १९४० से अबतक।

प्रथम उत्थान-काल :

बीसवीं शतीके प्रथम भागमें एक नवचेतनाकी लहर सारे देशमें फैल गअी थी। भाषा, शैली तथा काव्य-विषय आदिमें बहुत परिवर्तन हो रहा था। काँग्रेसके आन्दोलन द्वारा देशकी दुःखद स्थितिकी ओर युवकोंका ध्यान आकृष्ट हुआ। राष्ट्रीय भावनाएँ, प्राचीन गौरव-गान आदि विषय सामयिक कविताओंके मुख्य इतिवृत्त थे।

ऐसे समयमें प्राचीन और अर्वाचीनका समन्वय करके चलनेवालोंमें 'श्री तिरुपति वेंकट कवुलु' अग्रगण्य हैं। कविताको जन-सामान्यके सम्मुख लाकर, जनताके हृदयोंको काव्यकी माधुरीसे परिप्लावित करनेवाले इस कवि-युग्मने नगर-नगरमें शतावधान और अष्टावधान कर कविताको राजदरबारों और पण्डित-समाजके कारागारसे मुक्त कर जनताके सामने उपस्थित किया। कविताके सम्बन्धमें जनतामें अभिरुचि पैदा करनेवालोंमें ये सर्वप्रथम हैं।

इस युग्ममें एक कविका नाम श्री दिवाकर्ल तिरुपति शास्त्री और दूसरेका नाम चेल्लपिल्ल वेंकट शास्त्री है। गुरु-दक्षिणाके रूपमें इन्होंने प्रतिज्ञा की थी कि हम दोनों मिलकर ही कविता करेंगे और तबसे 'तिरुपति वेंकट कवुलु' के नामसे कविता करने लगे। तिरुपति शास्त्रीका देहान्त होनेपर भी वेंकट शास्त्रीकी रचना भी दोनोंके नामपर ही प्रकाशित हुई है। वेंकट शास्त्रीजी मद्रास सरकार द्वारा निर्वाचित प्रथम राजकवि थे। इनके समयमें आन्ध्र प्रदेशका प्रत्येक नगर इनके अवधानोंसे गूंजा करता था। आधुनिक कालके अधिकांश प्रमुख कवि इनके शिष्य-प्रशिष्य हैं।

शताधिक ग्रन्थकर्ता, राजकवि स्व. श्री श्रीपाद कृष्णमूर्ति शास्त्री पण्डित कवि थे। इनकी कविताका विषय-चयन एवं शैली एकदम प्राचीन ढर्रेकी है। दीर्घ समासोंसे भरी होनेपर भी इनकी कवितामें अनुपम प्रवाह है। ये आन्ध्रके दूसरे राजकवि थे।

'अभिनव तिक्कन्ना' के नामसे प्रसिद्ध श्री तुम्मल सीताराम मूर्ति चौधरी, राष्ट्रीय भावोंके अग्रणी कवि हैं। इनकी कवितामें तेलुगु मुहावरों एवं अति व्यावहारिक

पदोंकी झड़ी-सी लगी रहती है। 'राष्ट्र-गानमु', 'आत्मार्पण', 'धर्म-ज्योति' आदि इनके काव्य हैं।

प्राचीन वैभवपर लिखे गए श्री कोडालि सुब्बारावके गीत करुण रससे पूर्ण एवं हृदय-द्रावक हैं। उदाहरणार्थ :—

चट्टानें पिघल रोईं
तुँगभद्रामें शिथिल हुई,
मंदिर और महल बनीं
बन्दरोंकी दरबारें।
इतिहासमें मग्न हो गई
आन्ध्र वसुन्धराधिपोज्जवल विजय प्रतापकी कहानी
बच गई उसकी स्मृति स्वप्नकी नाईं।

यह गीत विजयनगरके खण्डहरोंको देख, उसके विगत वैभव एवं वर्तमान दुरवस्थापर दिल थाम कर, आठ आँसू रोनेवाले कविके हृदयोद्गारोंसे भरा पड़ा है।

महाकवि श्री विश्वनाथ सत्यनारायण पंडित कवि है। आप गद्य और पद्यमें अनेक शैलियोंके प्रणेता हैं। प्राचीन और अर्वाचीन दोनों पद्धतियोंपर इनकी कलम समान अधिकारसे चलती है। प्राचीन आन्ध्र वैभवको लेकर इन्होंने अनेक कविताएँ लिखी हैं। 'आन्ध्र प्रशस्ति' 'आन्ध्र-पौरुष', 'ऋतु संहार' आदि खण्ड काव्य, 'किन्नेरसानिपाटलु' एवं 'कोकिलम्म-पण्डिलु' नामक गीतकाव्य, 'वेइ पडगलु', 'एकवीरा', आदि उपन्यास इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। 'वेइ पडगलु' मानों भारतीय संस्कृतिका एक कोष है। इनकी विशेषता इस प्रदेशकी प्रकृति, मानसिक प्रवृत्तियों एवं तेलुगु भाषाकी स्वाभाविकताका यथातथ्य चित्रण करनेमें है। उनके पात्र इतने सच्चे लगते हैं कि हम तन्मय हो उनके सुख-दुःखमें अपनेको समभागी मान लेते हैं।

आजकल आप रामायण कल्पवृक्ष नामक महाकाव्य लिख रहे है।

श्री गुर्रम जाषुवा भी सुप्रसिद्ध कवि हैं। आप प्राचीनताके पक्षपाती हैं। 'फिरदौसी', 'स्वप्न-कथा', 'मुमताज-महल' आदि आपकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। श्री जाषुवा ईसाई हैं, फिर भी आपकी कविताओंपर हिन्दू-संस्कृतिकी अमिट छाप है। आपकी रचनाओंमें अछूतों और समाजके निम्न जातिके लोगोंकी वेदनाको साकार रूप दिया गया है। मेघदूतके आधारपर लिखे गए 'गब्बिलमु' नामक खण्ड-काव्यमें समाजके दलित प्राणियोंकी भावनाओंका मर्मस्पर्शी वर्णन किया गया है। आपका शब्द-चयन बड़ा सुन्दर है।

प्रथम उत्थान कालके अन्य प्रसिद्ध कवियोंमें श्री घडियारमु वेंकट शेष शास्त्री, वड्डादि सुब्बाराव, जनमञ्चि शेषाद्रि शर्मा, कट्टमञ्चि रामलिंगा रेड्डी, वेदमु वेंकटराय शास्त्री आदिकी गणना की जाती है।

द्वितीय उत्थान-काल :

तेलुगु कविता क्रमशः प्रौढ़ावस्थाको प्राप्त हुई। वह समाज-सुधार, राष्ट्रीय भावनाएँ आदि स्थूल विषयोंसे ऊपर उठकर, सूक्ष्म भावनाओंके क्षेत्रमें विचरने लगी। इस युगको हिन्दी साहित्यमें छायावादी युग कहते हैं, तेलुगु साहित्यमें भी यह काल वैसा ही है। तेलुगुमें इस प्रकारकी कविताओंको 'भाव-कविता' कहते हैं। छायावादके सभी लक्षण इस भाव कवितामें देखे जा सकते हैं। वे ही लाक्षणिक प्रयोग, भाषाकी वक्रता, प्रकृतिका आकर्षण, प्रकृतिका मानवीकरण आदि। रीति और नियमोंसे मुक्त हो कविता केवल भाव और लय-प्रधान होने लगी।

भाव और लय-प्रधान होनेसे ये कविताएँ गेय होती हैं और गीति-काव्यके लक्षणोंसे पूर्ण ये कविताएँ आत्मपरक होती हैं। कवि अपने व्यक्तिगत भावावेश-को बड़ी सचाईके साथ अभिव्यक्त करता है। वह स्पष्ट कहता है :—

निवास मेरा था, गन्धर्व लोक की
मधुर सुकुमार, सुधागान मंजुवाटि,
मैं हूँ एक राह-भटकी वियोग गीति।

इस युगके कवियोंका विषय-चयन जैसे निराला है, वैसे ही उनकी शैली एवं व्यञ्जना-प्रणाली भी नई है। इस युगके कवियोंने भाषा, भाव, शैली आदि सभी-में अपूर्व परिवर्तन उपस्थित किया है।

इस नई धाराके विरुद्ध प्राचीनता वादी आन्दोलन करने लगे। इस नए स्कूलमें रोमाण्टिक कविताको लोकप्रिय बनानेवाले श्री देवुलपल्ली कृष्ण शास्त्री हैं। इस भाव-कविताका आरम्भ करनेवाले श्री रायप्रोलु सुब्बारावजी हैं। इन युवक कवियोंको एकत्र कर उन्हें प्रोत्साहन देनेवाले हैं श्री तल्लावज्झल शिवशंकर शास्त्री। इन्होंने 'साहिति-समिति' नामक साहित्यिक संस्थाका आयोजन किया, जिसके मुखपत्रोंमें इन कवियोंकी भाव-कविताएँ छपा करती थीं।

खण्ड-काव्योंमें नवीनता लानेवाले और कवितामें नए प्रयोग करनेवाले श्री रायप्रोलु सुब्बाराव हैं। इन्हें 'नव्यान्ध्र-कवि-ब्रह्म' कहते है। आपने अनेक खण्डकाव्य और गीत लिखे हैं; इनमें 'ललिता', 'तृणकंकणमु', 'स्नेहलता', 'जडकुच्चुलु', 'आन्ध्रावली' आदि प्रसिद्ध हैं। आपका सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय गीत है :—

कहीं भी चला जा;
कहीं भी कदम रख,
किसी भी आसन पर चढ़,
कोई भी सम्मुख आए,
सराह अपनी मातृभूमि भारतीको,
अपनी जातिके गौरवकी रक्षा कर।

सुब्बारावजीने उमर खैयामकी रुबाइयोंका सुन्दर पद्यानुवाद किया है। ये अनूदित पद्य भाषा, भाव, शैली सभी दृष्टियोंसे मौलिक-से दिखाई पड़ते हैं।

देवुलपल्ली कृष्णशास्त्री इस युगके प्रख्यात भावुक कवि हैं। इन्हें आन्ध्र साहित्यका 'पन्त' कहा जा सकता है। प्रेमकी मधुरिमा, प्रकृतिसे तादात्म्य एवं दुःखकी संवेदना इनके काव्यके मुख्य विषय हैं। इनकी कल्पना बड़ी ही सुन्दर होती है। इनके प्रसिद्ध खण्ड-काव्य 'कृष्णपक्षमु', 'महती', 'कन्नीरु', 'ऊर्वशी' आदि हैं। सुकुमार भाव एवं सरल भाषा मानों इनकी सम्पत्ति हैं। कवितामें शब्दोंके नए चमत्कार दिखानेमें आप सिद्धहस्त हैं :—

हँस लेने दो, मुझे काहेकी शरम ?
मेरी तो इच्छा अपनी है,
मुझे डर काहेका ?

कवि अपना परिचय इस प्रकार देता है :—

देख मुझे, किसीका पिघले न दिल
समझते क्या हो मुझे ?
मैं हूँ अनन्त शोक तिमिर लोक
का एकाधिपति ।

कवि प्रकृतिमें मिल जानेकी अपनी इच्छा प्रकट करता है:—

पल्लवमें बन नव पल्लव
फूलमें बन फूल
डाली में बन डाली;
बन नव कोंपल,
छिपूं इस बन में
किसी तरह
रुकूं इस बन में ?

श्री कृष्णशास्त्रीके बाद श्री नंडूरि सुब्बारावका नाम आता है। ग्राम्य भाषा-में लिखे गए इनके 'एंकिपाटलु' में पवित्र प्रणयके भावोंसे भरे सुन्दर गीत है। इन गीतोंमें भाषा और भावकी होड़-सी लगी दिखाई देती है। इन गीतोंने साहित्य-क्षेत्रमें एक तूफान-सा खड़ा कर दिया। नूतन शैलीमें पवित्र प्रेम, संयोगका आनन्द, वियोगकी व्याकुलता, प्रतीक्षाकी आकुलता आदि बहुत ही सुन्दर रूपमें व्यक्त किए गए हैं।

इस युगके हालावादी कवियोंमें श्री दुव्वूरि रायिरेड्डी प्रमुख है। आपने उमर खैयामकी रचनाओंका 'पानशाला' नामसे अनुवाद किया है। 'कृषीवलुडु' इनका स्वतन्त्र काव्य है।

प्रसिद्ध कवियुग्म श्री पिंगळि लक्ष्मीकान्तम एवं काटूरि वेंकटेश्वरराव हैं। दोनों चेल्लपिल्ल वेंकट शास्त्रीके शिष्य हैं। इनका प्रसिद्ध काव्य 'सौन्दरनन्दमु' है।

इसमें शृंगारके दोनों पक्ष एवं शान्त रसका सुन्दर परिपाक हुआ है। इनकी रचनाओंमें शब्दका माधुर्य एवं भावोंका अजस्र प्रवाह खूब मिलता है।

श्री जंध्याला पापय्या शास्त्री बड़े ही भावुक है। 'करुण श्री' के अुपनाम से ये कविता करते है। 'उदय श्री', 'करुण श्री', 'विजय श्री' आदि इनके खण्ड-काव्य है। इनकी रचनाओंमें भाव-पूर्ण शब्द, अपने आप निर्झरकी धाराके समान झरते हैं। प्राचीन शैलीमें नवीन भावोंको लेकर चलनेवाली इनकी कविता बड़ी ही सरल और सरस होती है। इस कालके अन्य प्रसिद्ध कवि श्री वन्दुल सत्यनारायण, नोरी नरसिंह शास्त्री, नायनि सुब्बाराव, अडिवि बापिराजु आदि है।

तृतीय उत्थान-काल :

जिस प्रकार हिन्दी साहित्यमें छायावादकी प्रतिक्रियाके रूपमें तत्कालीन परिस्थितियोंके कारण प्रगतिवादका आविर्भाव हुआ, वैसे ही तेलुगु साहित्यमें भी हुआ। भाव कविताकी प्रतिक्रियामें यथार्थवादी कविताका अविर्भाव हुआ।

द्वितीय महायुद्धके आरम्भ होनेसे पूर्व सारे देशमें दरिद्रताका ताण्डव-नृत्य हो रहा था। बेकारी बढ़ रही थी। समाजके मध्यम वर्गमें आर्थिक विषमताके कारण जागृति पैदा हुई। बंगालमें अकालका भीषण रूप आँखोंके सामने ज्वालाकी तरह धधक रहा था। सर्वत्र हाहाकार मचा हुआ था। स्वतन्त्रताकी भावनाके साथ सत्याग्रहका आन्दोलन जोर पकड़ रहा था। विदेशी शासनका दमन और उत्पीड़न चरम सीमापर था।

इन परिस्थितियोंमें कविका हृदय विकल हो गया। उसने देखा कि कल्पना-के संसारमें विचरण करनेका अब समय नहीं है। कल्पनाके आकाशमें कितना ही ऊँचा उड़ो, पर रहना तो जमीनपर ही है। अतः यथार्थवादी कवि, कल्पनाके आकाशसे नीचे उतरकर आर्थिक विषमतासे पिसनेवाले समाजका चित्रण करने लगे।

साम्यवादी विचारधाराका इस यथार्थवादी कवितापर विशेष प्रभाव पड़ा। इस आधुनिक काव्यधाराको प्रोत्साहन देनेके लिए 'नवसाहित्य परिषद' की स्थापना हुई, जो आगे चलकर 'अभ्युदय रचयितल संघमु' में विलीन हो गई।

इस धाराके प्रसिद्ध कवि श्री श्रीरंगमु श्रीनिवासराव हैं। आप 'श्री-श्री' के अपने उपनामसे प्रख्यात है। नई कविताके विषयमें आपके ये विचार हैं :—

छन्दोंके बन्धनोंको
तोड़ फोड़, लिख डालें।
कहे कोई अरे मूर्ख है क्या यह ?
तो कहें, यह कविता है।

इस छन्द-रहित कविताके लिए आप कई वस्तुओंको आवश्यक मानते हैं :—

सिन्दूर, रक्त चन्दन,
बन्दूक, संध्या राग

बाघ-हत-हिरण रक्त,
कापालिक-नयन-ज्वाला
कलकत्ता-कालिका-जिह्वा
चाहिये नव कविताके लिए।

फिर यह कविता कैसे होगी? इसका प्रभाव क्या होगा? वे कहते हैं:—

हिलनेवाली, हिलानेवाली;
बदलनेवाली, बदलानेवाली,
गहरी नींदको हटानेवाली
पूर्ण जीवन प्रदान करनेवाली,
है नव कविता।

यह कवि केवल क्रान्तिसे ही सन्तुष्ट नहीं है, वह एक नवीन सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्थाकी स्थापनाकी प्रेरणा भी देता है।

श्री 'श्री' का प्रसिद्ध मुक्त-काव्य-संग्रह 'महाप्रस्थानमु' है।

अनिसेट्टि सुब्बारावजी प्रगतिवादी विचारधाराको बड़े ही कलात्मक ढंगसे व्यक्त करते है। 'अग्निवीणा' इनकी कविताओंका संग्रह है।

'आरुद्र' (भागवतुल शंकर शास्त्री) प्रलयका आह्वान करनेवालोंमें प्रमुख हैं। 'त्वमेवाहम्' नामक पुस्तकमें आपकी कविताएँ संग्रहीत हैं। हालमें ही आपका 'सिनेवाली' नामक खण्ड-काव्य प्रकाशित हुआ है।

श्रीरंगम् नारायणबाबू अति यथार्थवादी कविताओंके प्रसिद्ध कवि हैं। अति नवीन शैली एवं नवीन विचारधारामें आपकी कविता चलती है।

'कपालमोक्षमु', 'किटकीलोदीपमु' (खिड़कीमें दिया); 'रुधिर ज्योति' आदि आपकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। आपकी मृत्यु हाल ही में हुई है।

श्री तेन्नेटि सूरि, श्री बेल्लंकोंड़ा रामदासु, श्री पट्टाभि, श्री कुन्दुति आञ्जोजनेयुलु आदि इस धाराके प्रसिद्ध कवि हैं।

श्री जलसूत्रं रुक्मिणीनाथशास्त्री, पैरोडी (व्यंग्य कविता) लिखनेमें सिद्ध-हस्त है। 'अञ्जितलु' नामक इनका पैरोडी पद-संग्रह काफी प्रसिद्ध है।

हैदराबादके कवियोंमें श्री दाशरथी प्रमुख हैं। आप सभी प्रकारकी शैलियोंमें निपुणताके साथ लिख सकते हैं। आपकी कवितामें सच्चे अर्थोंमें व्यक्तिगत भावनाओंका सबल और स्वाभाविक प्रवाह है। 'अग्निधारा', 'रुद्रवीणा' आदि आपके प्रसिद्ध काव्य-संग्रह हैं। 'मस्तिष्कम् लो लेबोरेटरी' आपकी एक प्रसिद्ध कविता है।

सबल विचार अनायास ही कविकी कलमसे प्रसूत होते है। दाशरथी कहते हैं:—

है नहीं पहनने
व्याकरणका रेडिमेड लिबास, तो नंगे कूद पड़ते हैं
जनताके सामने (भाव मेरे)।

कालोजि नारायण, सी. नारायण रेड्डी, उत्पल सत्यनारायणाचार्य, रामराजु तेलंगानाके प्रसिद्ध कवि हैं।

इस प्रकार आधुनिक तेलुगु कविता, यद्यपि बंगला एवं अँग्रेजी साहित्यसे प्रेरणा प्राप्तकर प्रारम्भ हुई थी; तथापि अपनी विशेषताओंका उपार्जन कर; भिन्न-भिन्न धाराओंमें प्रवाहित होती हुई, आधुनिक भारतीय साहित्यमें अपने विशिष्ट स्थानपर विराजमान है। वह भावोंमें, वस्तु-चयनमें, शैलीमें, छन्दोंमें, भाषामें; काव्यके सभी अंगोंमें एक नवीनता लेकर उज्ज्वल भविष्यकी ओर अग्रसर हो रही है।

नाटक :

आधुनिक आन्ध्र साहित्यके नाटक ; यक्ष गानों व वीथि भागवतोंकी अपेक्षा संस्कृत तथा अँग्रेजी नाटक-परम्परासे, अत्यधिक प्रभावित हैं। अुनके रचना शिल्प-विधानपर संस्कृत व अँग्रेजी नाटक साहित्यका ही प्रभाव परिलक्षित होता है।

१९ वीं शतीके उत्तरार्धमें धारवाड़के नाटच समाजने आन्ध्र प्रान्तमें घूम-घूमकर ; फारसी और हिन्दी नाटकोंके प्रदर्शन द्वारा खासा धूम मचा दी। इन नाटकोंकी लोकप्रियतासे प्रोत्साहित होकर ; तेलुगुमें नाटक रचना करने और उन्हें अभिनीत करानेके लिये कुछ उत्साही युवक मैदानमें आए। प्रत्येक नगरमें एक या दो नाटच-समाजोंकी स्थापना हुई। काँग्रेसके प्रख्यात आन्ध्र नेता देशभक्त कोंडा वेंकटप्पय्या पन्तुलु और आन्ध्र केसरी टी. प्रकाशम् पन्तुलु भी इनमें भाग लेते थे।

तेलुगु नाटक साहित्यका प्रारम्भिक युग अनुवादात्मक और अनुकरणात्मक रहा है। आधुनिक आन्ध्र साहित्यके प्रतिष्ठापक श्री वीरेशलिंगम पन्तुलुने 'शाकुन्तल' ; 'रत्नावली', 'कामेडी आफ अेरर्स' आदिका अनुवाद किया। 'अभिज्ञान शाकुन्तल' के तो तेलुगुमें कोअी पच्चीससे अधिक अनुवाद हुए, पर वीरेशिलंगम पन्तुलुका अनुवाद श्रेष्ठ माना जाता है। श्री वेदमुवेंकटराय शास्त्रीने 'उत्तर रामचरित' और हर्षके सभी नाटकोंका; श्री वड्डादि सुब्बारायुडुने 'वेणी संहार'का, तिरुपति वेंकटकवुलुने 'मुद्राराक्षस', 'मृच्छकटिक' ; 'बाल रामायण' का, वेटूरि प्रभाकर शास्त्रीजीने 'नागानन्द' का, दासु श्री रामुलुजीने 'मालती माधवका', श्री चिलकमर्ति लक्ष्मीनरसिंहमजीने भासके सभी नाटकोंका अनुवाद किया है। इनके अतिरिक्त 'तापस वत्सराजु' 'कौमुदी महोत्सव'; 'कर्पूर मञ्जरी' आदि लगभग सभी संस्कृतके नाटकोंका तेलुगुमें अनुवाद हुआ है। अँग्रेजीसे शेक्सपियरके नाटकोंके कई अनुवाद भी प्रकाशित हुए है। बंगला और हिन्दीके नाटकोंके अनुवाद भी हुए हैं। महाकवि रवीन्द्रके नाटकोंके कई अनुवाद हुए हैं, जिनमें श्री बेजवाड़ा गोपाल रेड्डीके अनुवाद सुन्दर हैं। श्री डी. एल. रायके "चन्द्रगुप्त", "सीता" आदिका श्रीपाद कामेश्वर-रावजीने अनुवाद प्रस्तुत किया है।

सन् १८६० ई. में श्री कोराड रामचन्द्र शास्त्रीने 'मञ्जरी मधुकरीयमु' की रचना की, जो तेलुगुका सर्वप्रथम मौलिक नाटक माना जाता है। सन् १८७५ में

श्री वाविलाला वासुदेव शास्त्रीने 'नन्दक राज्य' नामक मौलिक नाटककी रचना की।

स्वयं मौलिक नाटकोंकी रचनाकर, उनका प्रदर्शन कर, लोकप्रिय बनानेवाले प्रथम नाटककार और अभिनेता श्री धर्मवरम रामकृष्णाचार्य है। इन्होंने बल्लारि नगरमें 'सरस विनोदिनी सभा' की स्थापना की। इस सभाने आन्ध्र प्रान्तमें प्रथमतः पारसी कम्पनियोंके अनुकरणपर, नाटकोंका अभिनय किया। श्री आचार्यजीने ३० से अधिक नाटक लिखे हैं और ये सभी नाटक अभिनीत हो चुके हैं। (पन्द्रह नाटक पुस्तकाकार प्रकाशित हुए है।) इन नाटकोंकी कथावस्तु यद्यपि पौराणिक है, फिर भी घटना-सम्विधान और कल्पना-चातुर्यके कारण, ये नाटक यथेष्ट लोकप्रिय हैं। 'चित्रनलीयमु', 'विषाद सारंगधर', 'चन्द्रहास', 'वरूथिनी' आदि इनके प्रसिद्ध नाटक हैं। अंकोंको दृश्योंमें विभाजित करना; प्रोलोग और एपिलोगका लिखना, लम्बे स्वगत भाषण, दुखान्त आदि, पश्चिमी नाटकोंके प्रभावसे इनके नाटकोंमें समाविष्ट हुए है। 'विषाद सारंगधर' तेलुगुका प्रथम दुःखान्त नाटक माना जाता है। वर्तमान राजनैतिक, धार्मिक और सामाजिक समस्याओंको आचार्यजीने अपने पौराणिक नाटकोंमें भी स्थान दिया है। श्री रामकृष्णाचार्यको उनकी अनन्य सेवाओंके कारण आन्ध्र प्रदेश 'आन्ध्र नाटक पितामह' के रूपमें याद करता है।

उसी वल्लारी नगरमें एक दूसरे वकील साहब हुए हैं; ये है श्री कोलाचलमु श्रीनिवासराव। इन्होंने भी नाटकोंकी रचनाकर उन्हें अभिनीत कराया है। इन्होंने 'वाणी-विलास नाटक सभा' की स्थापना की। इन्होंने 'प्रपञ्च नाटक चरित्र' (संसारके नाटकोंका इतिहास) लिखा, जो एक श्रेष्ठ परिचयात्मक और आलोचनात्मक ग्रन्थ है। रावसाहबने भी काफी नाटक लिखे हैं। 'सुनन्दिनी परिणय', 'विजय नगर राज्य पतनमु', 'प्रतापाक्बरीयमु', 'मदालसा', 'सत्य हरिश्चन्द्र', 'पादुका पट्टाभिषेकमु' आदि इनके प्रसिद्ध नाटक हैं। 'विजयनगर राज्य पतनमु' बहुत ही लोकप्रिय हुआ है। मौलिक रूपसे ऐतिहासिक और पौराणिक नाटकोंकी रचनाके अतिरिक्त, रावजीने संस्कृत, तमिल और मराठी नाटकोंके अनुवाद भी प्रस्तुत किए हैं। इन्होंने कुछ सामाजिक नाटक और प्रहसनोंकी भी रचना की है। ये 'आन्ध्र ऐतिहासिक नाटक-पितामह' के नामसे प्रसिद्ध है।

'प्रतापरुद्रीयमु', 'उषा', 'बोब्बिली'—ये तीन मौलिक नाटक श्री वेदमु वेंकटराय शास्त्रीके है। इनमें–'प्रतापरुद्रीयमु', जो काकतीय प्रतापरुद्र और खिलजी सुलतानोंके इतिहाससे सम्बन्धित है, तेलुगुके ऐतिहासिक नाटकोंमें अपना विशिष्ट स्थान रखता है। इस नाटकके रचना-वैशिष्टय; चरित्र चित्रण; पात्रोचित भाषा-प्रयोग, सूक्ष्म व्यंग्य आदि मार्केके हैं। प्रतापरुद्रका मन्त्री यौगन्धरायण भासके यौगन्धरायणकी याद दिलाता है।

पानुगण्टि लक्ष्मीनरसिंहरावजीने लगभग तीस नाटकोंकी रचनाकर, 'आन्ध्र शेक्सपियर' की ख्याति प्राप्त की है। इनके नाटकोंमें 'पादुका पट्टाभिषेक', 'राधाकृष्ण', 'विप्रनारायण' बहुत ही लोकप्रिय नाटक हैं। ये नाटक-रचनामें पद्य और गीतोंकी अपेक्षा गद्यको ही महत्व देते हैं।

श्री चिलकमर्ति लक्ष्मीनरसिंहमजीका 'गयोपाख्यान' आन्ध्रके नाटक-क्षेत्रका श्रेष्ठ और लोकप्रिय नाटक रहा है। इस नाटककी जितनी प्रतियाँ बिकी हैं, उतनी शायद ही किसी दूसरे नाटककी बिकी हों। 'प्रसन्न-यादवमु', 'परिजातापहरणमु', 'प्रह्लाद चरित्र' इनके अन्य प्रसिद्ध नाटक है। नरसिंहमजीके नाटकोंपर संस्कृत नाटकोंका प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक है, पर हास्य और व्यंग्ययुक्त वार्तालाप अँग्रेजी नाटकोंकी याद दिलाते है।

श्री तिरुपति-वेंकट कवुलुका लिखा 'पाण्डवो उद्योग-विजयमुलु' इतना प्रसिद्ध हुआ है कि उसके मधुर पद्य जनताकी जबानपर चढ़ गए है। इस नाटकका कृष्णाद्यौत्याका (श्रीकृष्णका दूत-कार्य) दृश्य बड़ा मार्मिक और प्रभावशाली बन पड़ा है। इन्होंने महाभारतपर आधारित कुछ और नाटक भी लिखे है।

श्री बलिजेपल्लि लक्ष्मीकान्तमका लिखा 'सत्य-हरिचन्द्र' भी काफी लोकप्रिय बना है। इस नाटकके पद्य बड़े ही मधुर हैं।

तेलुगुके सामयिक नाटकोंमें श्री गुरुजाडा अप्पारावका 'कन्याशुल्क' (१८९७) सर्वप्रसिद्ध है। इस नाटकको लिखे सत्तर वर्ष हो गए, पर यह आज भी नया है। इसमें बडे ही तीखे ढंगसे सामाजिक कुप्रथाओंकी पोल खोली गई है। वेश्या-प्रथा; बाल-विवाह; कन्या-शुल्क (वर शुल्क या दहेज नहीं), नई पीढ़ीके युवकोंके ढोंग, फैशन आदिका मार्मिक चित्रण हुआ है। यह नाटक सामाजिक सुधारको दृष्टिमें रखकर लिखा गया है। अतः नाटककी कसौटीपर उतना खरा नहीं उतरता। इस नाटकका प्रमुख पात्र 'गिरीशमु' आन्ध्र प्रान्तमें ऐतिहासिक पुरुष-सा बन गया है, जो ढोंगी और धोखेबाज लोगोंका प्रतिनिधि है। परवर्ती सामाजिक नाटकोंपर 'कन्याशुल्कम्' का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है।

कवि-सम्राट् विश्वनाथ सत्यनारायणने कविता, उपन्यासके अतिरिक्त नाटक रचनामें भी अपनी प्रतिभा दर्शाई है। 'नर्तनशाला', 'अनारकली', 'वेनराजु' आदि आपके सुन्दर नाटक है। नर्तनशालामें कीचक (विराट महाराजका साला) को उदात्त विषाद नायकके रूपमें चित्रित करनेका सफल प्रयत्न किया है।

उपर्युक्त नाटककारोंके अतिरिक्त सोमराजु रामानुजराव, डी. सीतारामराव, यज्ञनारायण, मल्लादि सूर्यनारायण शास्त्री, काल्लकूरि नारायणराव; गुण्डियंडवेंकट सुब्बाराव, पिंगलि नागेन्द्रराव आदि भी प्रमुख हैं। प्राचीन सम्प्रदायोंके अनुकूल गद्य-पद्य युक्त नाटकोंकी सामग्री अधिकांशतः ऐतिहासिक व पौराणिक रही है। इस प्रथम उत्थानके बाद लेखकोंका दृष्टिकोण बदल गया। अतः वस्तु और शैलीमें स्पष्ट

परिवर्तन लक्षित होता है। नये उत्थानकी रचनाओंकी सामग्री बहुत कुछ वर्तमान सामाजिक समस्याओंपर ही आधारित है। इसमें केवल गद्यका ही प्रयोग किया गया है। भाषा व्याकरण सम्मत न होकर बोलचालकी है। रचना-विधान और रंगमञ्चके प्रबन्धपर अधिकाधिक पाश्चात्य प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

आचार्य आत्रेयके नाटकोंमें मध्यवर्गीय परिवारोंकी समस्याओंका प्रभावशाली चित्रण मिलता है। सामान्य मनुष्यके हृदयमें, वर्तमान परिस्थितिके प्रति परिलक्षित होनेवाले भय, शंका आदि मनोवृत्तियोंके चित्रणमें श्री आत्रेय सिद्धहस्त हैं। 'अद्देकोंप' (भाड़ेका मकान) 'कप्पलु' (मेंढक); 'भयं' आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं। कोपल्ले वेंकट रामारावने अपने नाटकोंमें सामाजिक दुराचारोंका खण्डन बड़े जोरदार शब्दोंमें किया है। श्री पिनिशेट्टकी 'पल्ले पडुचु' (ग्रामीण युवती) में किसान और जमींदारके संघर्षका सुन्दर चित्र है। श्री बुच्चिबाबूका 'आत्म वञ्चन'; बोअी भीमन्नाके 'पोलिस', 'कूलिराजु' रामदासके 'मास्टरजी', 'पुनर्जन्म' भी अच्छे नाटक हैं। इनके अतिरिक्त नरसराजु जि. सूर्य, प्रख्य श्रीराममूर्ति, नरसिंहराव आदि ख्यातिप्राप्त नाटककार हैं। माना जाता है कि अबतक तेलुगुमें कोअी ढाअी हजार नाटक लिखे गअे हैं।

एकांकी :

गत दो दशकोंसे बड़े नाटक लिखनेकी प्रथा कम होती जा रही है और एकांकियोंका प्रचलन बढ़ता जा रहा है। मुख्यतया कालेज और स्कूलके वार्षिक उत्सवोंके उपलक्ष्यमें और मासिक पत्रोंमें प्रकाशनार्थ लिखे गए इन एकांकियों पर; पश्चिमी प्रभाव अधिक है।

मद्रासके भू. पू. मुख्य न्यायाधीश श्री पी. वी. राजमन्नार तेलुगुके सर्वप्रथम एकांकी-लेखक माने जाते हैं। इनके एकांकियोंमें मध्यवर्गीय समाजकी समस्याओं और कुप्रथाओंका प्रभावशाली चित्रण मिलता है। 'ये भी कैसे मर्द हैं?' 'कृष्णसर्प', 'दोष किसका?' आदि श्री राममन्नारके सुप्रसिद्ध एकांकी हैं। श्री गुडिपाटी वेंकटाचलके अेकांकियोंपर फ्रायडका गहरा प्रभाव है। स्त्री-पुरुषके सम्बन्धका, पुरुषका दमन और स्त्रीकी कुण्ठाओंको 'चलं' ने बिलकुल नग्न रूपमें; पर बड़े ही जोरदार शब्दोंमें व्यक्त किया है। भले ही आप उनके भावों व सिद्धान्तोंसे सहमत न हों, पर भावाभिव्यक्तिकी कुशलता; प्रभाव और टेकनिकको देखकर उन्हें सराहना ही पड़ेगा। श्री भमिडिपाटि कामेश्वरारावके अेकांकी मधुर हास्यसे युक्त पाठकोंको बार-बार पढ़नेके लिए विवश करते हैं। डा. मारेमंड रामाराव ऐतिहासिक एकांकी लिखनेमें सिद्धहस्त हैं। चिन्ता दीक्षितुलु, मल्लादि विश्वनाथं, डी. वी. नरसराजु मल्लादि अवधानीने भी अच्छे एकांकी लिखे हैं।

१९४३ के बादके लेखकोंने यथार्थ (अति !) के चित्रण की ओर अधिक ध्यान दिया है। बुच्चिबाबूका 'उमरखैय्याम' व 'तिष्यरक्षिता' इस नये दृष्टिकोणके

उदाहरण हैं। आत्रेयकी 'प्रगति' में मानव-समाजकी प्रगतिका वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। श्री विनिशेट्टीके 'स्त्री' नामक एकांकीमें क्षणिक क्रोधावेश-से अभिभूत होकर पत्नीको घरसे बाहर निकाल देनेवाले एक गृहस्थका मार्मिक चित्रण किया गया है। इस एकांकीकी विशेषता यह है कि पारवारिक जीवनसे सम्बन्धित होनेपर भी इसमें एक भी स्त्री पात्र नहीं है।

'कृष्ण पत्रिका', 'भारती', 'आन्ध्र पत्रिका', 'आन्ध्र प्रभा' आदि पत्रिकाओंमें भी सुन्दर एकांकी प्रकाशित हुए हैं।

श्री शिवशंकर शास्त्रीने 'दीक्षित दुहिता', 'पद्मावती चरण-चारण चक्रवर्ती' के नामसे गेय नाटक लिखे हैं; जिन्होंने काफी प्रसिद्धि प्राप्त की। श्री सी. नारायण रेड्डीका 'नव्वनि पुव्वु' (अनखिला फूल) इसी ढंगकी सुन्दर गेय नाटिका है। श्री विश्वनाथ सत्यनारायणका 'किन्नेरसानि पाटलु' काव्य है, फिर भी उसमें गेय नाटकके लक्षण पर्याप्त मात्रामें मिलते हैं।

आजकल नाटक और एकांकियोंके क्षेत्रमें रेडियोका भी विशिष्ट स्थान है। इन श्रव्य नाटकोंकी अपनी कुछ मर्यादाएँ और सीमाएँ हैं। इस दिशामें श्री कपिल काशीपति, बुच्चिबाबू, गोरा शास्त्री, पद्मराजु आरूद्र, रजनी, मुनिमाणिक्यम् नरसिंहरावने स्तुत्य प्रयोग किए है।

श्री कोप्परपु सुब्बारावका 'अली मुठा' (अलीका समूह) संगीत नाटकोंमें प्रथम और श्रेष्ठ माना गया है।

बालोपयोगी नाटक लिखनेमें नार्ल चिरंजीवि, पालकि सरस्वती देवी, चिन्ता दीक्षितुलु प्रमुख हैं।

इस प्रकार तेलुगुने गत दो शताब्दियोंमें नाटक साहित्यमें सराहनीय रचनाएँ प्रस्तुत की है। तेलुगुका नाट्य साहित्य भारतीय नाटक साहित्यमें प्रमुख स्थानका अधिकारी है। क्या रचना, क्या वस्तुविधान, क्या शैली—सभी दृष्टियोंसे साहित्यका यह अंग उत्तम सिद्ध हुआ है।

उपन्यास :

दक्षिणकी भाषाओंमें तेलुगुमें ही सर्वप्रथम उपन्यास-रचना हुई। सन् १८६४ में ही श्री कोक्कोण्ड वेंकटरत्नम पन्तुलुजीका 'महाश्वेता' नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ; जो 'कादम्बरी' का स्वेच्छानुवाद है। सन् १८७२ में नरहरिसेट्टि गोपालकृष्ण सेट्टिका 'श्रीरंगराज चरित्र' सच्चे अर्थोंमें ऐतिहासिक उपन्यास है, पर श्री वीरेशलिंगमका 'राजशेखर चरित्र' (१८७८) ही तेलुगुका पहला उपन्यास माना जाता है। इस उपन्यासमें सामाजिक दुराचारोंपर कटु व्यंग्य किया गया है।

'चिन्तामणि' पत्रिका (१८९२-९९) के पुरस्कार प्राप्त करनेवाले लेखकोंमें श्री खण्डवल्लि रामचन्द्रुडु और श्री चिलकमर्ति लक्ष्मीनरसिंहमजी मुख्य हैं। नरसिंहम पन्तुलुजीने सामाजिक, ऐतिहासिक, हास्यरसात्मक और अनूदित कई उपन्यास

लिखे हैं। श्री केतवरपु वेंकट शास्त्रीजीने कई ऐतिहासिक उपन्यास लिखे हैं। 'आन्ध्र प्रचारिणी ग्रन्थमाला', 'विज्ञान चन्द्रिका ग्रन्थमाला' और 'वेगुचुक्क ग्रन्थमाला' ने कई सुन्दर उपन्यास प्रकाशित किए हैं। बंकिमचन्द्र और रवीन्द्रके बंगाली उपन्यासोंके सुन्दर अनुवाद हुए हैं। आज तो शरच्चन्द्र,प्रेमचन्द आदि लेखकोंकी रचनाओंके अनुवाद धड़ाधड़ हो रहे हैं।

श्री विश्वनाथ सत्यनारायणजीके उपन्यासोंका विशिष्ट स्थान है। 'एक वीरा' उनका प्रथम और सुन्दर उपन्यास है। इसका हिन्दी अनुवाद श्री अं. हनुमय्याजी ने 'दक्षिण भारत' (मद्रास) में प्रकाशित किया है। 'वेइ पडगलु' (सहस्र फन) भारतीय (खासकर आन्ध्र) समाज और संस्कृतिका मानों विश्वकोश ही है। 'चेलिपलि कट्टा', 'धर्मचक्र', 'बद्दन्नसेनानि', 'स्वर्गकी सीढ़ी' 'मा बाबू' आदि अन्य उपन्यास हैं।

श्री अडिवि बापिराजुने कई सामाजिक उपन्यास लिखे है। 'नारायणराव' शीर्षक उपन्यासने 'वेइ पडगुलु' के साथ आन्ध्र विश्वविद्यालयके पुरस्कारको प्राप्त किया है। इसका हिन्दी अनुवाद श्री ए. रमेश चौधरीने साहित्य अकादमीके लिए किया है। उनके 'हिमबिन्दु' और 'कोनंगी' भी काफी लोकप्रिय सिद्ध हुए है।

श्री श्रीपाद सुब्रह्मण्य शास्त्री कृत 'आत्मबलि', गोपीचन्दजी की 'असमर्थकी जीवन-यात्रा' बुच्चिबाबूकी 'अन्तमें बचनेवाली', जी. वी. कृष्णारावकी 'कठपुतली', वलिवाड कान्तारावकी 'दीवार परकी तस्वीर' पोतुकूचि साम्बशिवरावकी 'उदय किरण' आदि रचनाओंका सामाजिक उपन्यासोंमें विशिष्ट स्थान है।

श्री उन्नव लक्ष्मीनारायणजीके 'मालपल्लि' नामक उपन्यासमें सामाजिक और राजनैतिक समस्याओंका सुन्दर चित्रण किया गया है। भारतीय स्वतन्त्रता-आन्दोलनके क्रमिक विकासके साथ-साथ इसमें चित्रित प्रभावशाली चरित्र और इसकी मनोहर शैलीके कारण यह उपन्यास अत्यधिक लोकप्रिय बना हुआ है। श्री उप्पल लक्ष्मणराव का 'वह (He) और वह (She)', महीधर राममोहनरावका 'रथचक्र' और 'दवानल' स्व. श्री वट्टिकोट आळवारस्वामीका 'जन्ताका आदमी' आदि उपन्यास सामाजिक और राजनैतिक विचारधाराओंके सुन्दर सम्मेलनके रूपमें लोकप्रिय बने हुए है।

ऐतिहासिक उपन्यासकारोंमें श्री नोरिनरसिंह शास्त्रीका प्रथम स्थान है। ऐतिहासिक उपन्यासोंके अन्य लेखकोंमें सर्वश्री 'नारायण भट्ट', 'रुद्राम्बा', 'गोनगन्नारेड्डी' आदि सुप्रसिद्ध हैं। आजकल श्री शास्त्रीजी श्री नाथ नामक प्रसिद्ध महाकविके जीवनपर आधारित एक उपन्यास तैयार कर रहे हैं। ऐतिहासिक तथ्योंको सुन्दर अवं सरस कथाके रूपमें गूँथनेकी शास्त्रीजीकी प्रतिभा अनुपम है। डा. काकर्ल नरसिंहमका 'कनकाभिषेक', 'रघुनाथरायलु', श्रीमति वसुन्धरा का 'तंजाऊरका पतन' एवं 'सप्तपर्णि', धूलिपाल श्रीराममूर्तिका 'भुवनविजय', नेलटूरि

वेंकटरमणय्याका 'मधुमावती', 'छत्रग्राही' सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास हैं। श्री तेन्नेटिसूरिका 'चेंघिज़खान' मंगोलियाके शासकके चरित्रका प्रभावशाली चित्र अंकित करता है।

सेक्स समस्याओंको लेकर उपन्यास लिखनेवालोंमें श्री गुडपाटि वेंकट चलमका प्रथम स्थान है। भावोंमें क्रान्तिके साथ 'चलम' का रचनाकौशल अपना सानी नहीं रखता। 'शशिरेखा', 'ब्राह्मणीकमु', अमीना', 'मैदान' आदि आपके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। श्री धनिकोंडा हनुमन्तराव, आदिने 'चलम' का अनुकरण किया है।

हास्यप्रधान उपन्यास लिखनेवालोंमें श्री मुनि माणिक्यम नरसिंहाराव, मोक्कपाटि नरसिंह शास्त्री, जलसूत्रम रुक्मिणीनाथ शास्त्री आदि प्रमुख हैं। नरसिंहा रावके उपन्यास घरेलू होते हैं। उनके उपन्यासोंकी नायिका 'कान्तम' आन्ध्रके पाठकोंको पुलकित करती रहती है। नरसिंह शास्त्रीके 'बैरिस्टर पार्वतीशम' की एक-एक पंक्ति पढ़कर हँसे बिना नहीं रहा जा सकता।

मनोवैज्ञानिक ग्रन्थियोंको आधार बनाकर लिखनेवालोंमें कोडवटिगण्टि कुटुम्बराव, गोपीचन्द, बुच्चिबाबू प्रमुख हैं। कुटुम्बरावके 'पढ़ाई', 'स्त्री-जीवन' आदिमें मनोविज्ञानके साथ-साथ कथा सम्विधान भी अच्छा बन पड़ा है। गोपीचन्दके 'अँधेरे कोने', 'खूनके धब्बे' आदि उपन्यासोंमें मनके अँधेरेका चित्रण हुआ है। सौरीस, राचकोण्डा विश्वनाथ शास्त्री और बुच्चिबाबूने मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास लिखे हैं।

पिनिसेट्टी सुब्बारावके 'दत्तता' (गोद लेना) शीर्षक उपन्यासोंमें धनी और निर्धन परिवारोंके जीवनके अन्तरको सुस्पष्ट रूपसे चित्रित किया गया है। नटराजन नामक तमिल भाषा-भाषीने 'शारदा' के उपनामसे 'भलाई-बुराई', 'अपस्वर', 'कौन सत्य' नामक तीन सामाजिक उपन्यास लिखे हैं। इनमें निम्न और मध्यम वर्गकी समस्याओंका सुन्दर चित्रण हुआ है। अकाल मृत्युने इनकी लेखनी थाम दी, वरन् इनसे तेलुगु उपन्यास साहित्यको काफी आशाएँ थीं।

आजकल जासूसी उपन्यासोंकी बाढ़-सी आ रही है। इनमेंसे कुछ अच्छे उपन्यास भी प्रकाशित हुए हैं। आरुद्र, टेम्पोराव, कोम्मूरि साम्बशिवरावने अच्छे उपन्यास लिखे हैं।

कुछ महिलाओंने भी उत्तम उपन्यासोंकी रचना की है। जयन्ति सूरम्माजी का 'सुदक्षिणा चरित्र' (पौराणिक), पुलुगुर्त लक्ष्मीनरसमाम्बाका 'सुभद्रा', 'अन्नपूर्णा' (सामाजिक), मालती चन्दूरका 'चम्पक', 'दीमक' वसुन्धराका 'दूरके पहाड़' आदि इस दिशामें उल्लेखनीय हैं।

इतर भारतीय भाषाओंके उपन्यासोंके अतिरिक्त अनेक यूरोपीय उपन्यासोंके भी अनुवाद हो चुके हैं और हो रहे हैं।

इस प्रकार आन्ध्रका उपन्यास साहित्य विविध उपन्यास-रचनाओंसे सुसम्पन्न है। अनुवाद, अनुकरणके साथ-साथ विभिन्न शैलियोंके मौलिक और श्रेष्ठ उपन्यासोंकी भी रचना हुई है। तेलुगु उपन्यासका विश्व-साहित्यमें विशिष्ट स्थान है।

कहानी :

यूरोपीय साहित्यके सम्पर्कसे आधुनिक आन्ध्र गद्य साहित्यमें आई हुई विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियोंमें कहानीका विशिष्ट स्थान है। पश्चिमी कहानियोंके विशिष्ट शिल्प-विधान एवं टेकनीकसे सम्पन्न होकर आजकी तेलुगु कहानीकी गणना संसारकी सर्वश्रेष्ठ कहानियोंमें होती जा रही है।* गद्यकी सभी विधाओंका श्रीगणेश करनेवाले वीरेशलिंगमजीके हाथों, केवल इस विधाका ही प्रारम्भ नहीं हुआ। स्व. श्री गुरुजाडा अप्पारावने १९१० में अँग्रेजीमें एक कहानी लिखी थी। उसके बाद 'आपका नाम', 'सुधार' आदि तेलुगु कहानियाँ लिखकर आपने कथा-साहित्यका श्रीगणेश किया।

वेदमु वेंकटराय शास्त्रीने 'भोज-कालिदासकी कथाओं'मेंसे 'बेताल पञ्च-विशति' और 'कथा सरित्सागर' नामक तीन कहानी-संग्रह प्रकाशित किए। श्री चलमर्ति लक्ष्मीनरसिंहमजीके 'राजस्थान कथावली', 'चमत्कार मञ्जरी', 'चित्रकथा गुच्छमु' आदि कहानी-संग्रह प्रकाशमें आए। प्राचीन और नवीनका सामञ्जस्य करते हुए विभिन्न विषयोंको आधार बनाकर लिखनेवाले सुधारवादी लेखक हैं श्री वेलुरि शिवराम शास्त्री। आधुनिक सभ्यतापर मीठी चोट करते हुए हास्य प्रधान और बालोपयोगी कहानी लिखनेमें सिद्धहस्त थे चिन्ता दीक्षितुलु। श्री श्रीपाद सुब्रह्मण्य शास्त्रीकी कहानियोंमें तेलुगु कहानीका ठेठ रूप परिलक्षित होता है जो पश्चिमी प्रभावसे परे है। सहज सुन्दर वार्तालाप और यथार्थ घटनाओंको लेकर इनकी एक-एक कहानी अमृतकी बूँद है। केवल वार्तालाप द्वारा ही पूरी कहानी लिखना इनकी विशेषता है। श्री तल्लावज्झल शिवशंकर स्वामी, अडिवि बापिराजु, विश्वनाथ सत्यनारायण आदि भी सुप्रसिद्ध कहानीकार हैं। व्यंग और चमत्कारसे भरी हुई कहानियोंके लिए प्रसिद्ध हैं श्री कोडवटिगण्टि कुटुम्बराव।

कथावस्तुमें, शैलीमें, भावमें और भाषामें भी निराली नवीनता लानेवाले लेखक हैं श्री गुडिपाटि वेंकटचलम्। साहित्यके इतिहासमें 'विपथगा', 'विप्लव-कारी' के नामोंसे प्रसिद्ध हैं। विरोधी दलकी कटु आलोचना सहते हुए भी अपने मार्गपर अचल बने रहे। मुख्यतः सेक्स समस्याको लेकर लिखी गई आपकी कहानियाँ काफी प्रसिद्ध हुई हैं।

---

* श्री पालगुम्मि पद्मराजुकी लिखी 'तूफान' नामक कहानी सन् १९५२ में विश्व कहानी प्रतियोगितामें द्वितीय पुरस्कार प्राप्त कर चुकी है। हालमें श्री आरुद्रकी लिखी 'गोदावरीके कूल' शीर्षक कहानीको भी उत्तम पुस्कार प्राप्त हुआ है।

श्री मुनिमाणिक्यम नरसिंहारावजी 'कान्तम्' तेलुगु प्रान्तकी बहुओंके प्रतिनिधि हैं। आपकी कहानियाँ क्लान्त और श्रान्त दैनिक जीवनको मधुर हास्यसे भर देती हैं। इन कहानियोंमें 'कान्तम्' को नायिका बनाकर गृहस्थ-जीवनका सुन्दर चित्रण किया गया है।

श्री इन्द्रगण्टि हनुमच्छास्त्री और मोक्कपाटि नरसिंह शास्त्रीने अच्छी कहानियाँ लिखी हैं। इन्द्रगण्टिकी शैली पाण्डित्यपूर्ण है तो मोक्कपाटिकी शैली अति सरल है।

श्री पालगुम्मि पद्मराजुने कहानियाँ कम लिखी है, पर प्रत्येक कहानी अपने विशिष्ट शिल्पके लिअे प्रसिद्ध है। आकर्षक कथा-वस्तु, सहज सुन्दर घटनाएँ, मधुर-वार्तालाप आदिने इनके टेकनीकमें चार चाँद लगा दिए हैं। 'तूफान' कहानीने विश्व लघुकथा-प्रतियोगितामें द्वितीय पुरस्कार प्राप्त कर तेलुगु कहानीको महत्व प्रदान किया है।

श्री 'करुण कुमार' ने कहानियोंमें अपने उपनामको सार्थक किया है। आपकी कहानियोंमें ग्रामीण जनताके पीड़ित जीवनकी झाँकीके साथ-साथ आधुनिक सभ्यताके कारण पिसनेवाले नागरिकोंके चित्र भी मिलते है।

श्री गोपीचन्द एक सशक्त कहानीकार हैं। मानसिक संक्षोभको और संस्कारके परदेमें विषैली भावनाओंको आप बड़े ही प्रभावशाली ढंगसे व्यक्त करते है। ऐतिहासिक घटनाक्रम, सामाजिक परिस्थितियाँ, व्यक्तियोंकी मानसिक गतिविधियाँ और हेतुभूत भिन्न-भिन्न वातावरणको समझकर रचना करनेवाले हैं श्री गोपीचन्द। सामाजिक और राजनैतिक समस्याओंसे प्रभावित रहनेके कारण इनकी कहानियाँ हृदयकी अपेक्षा मस्तिष्कको अधिक प्रभावित करती है।

नवीन कहानी लेखकोंमें श्री बुच्चिबाबूका अपना विशिष्ट स्थान है। अँग्रेजी प्राध्यापकके पदपर रहनेके कारण आपने अपने कहानी-शिल्पमें पश्चिमी रीतियोंको अत्यधिक अपनाया है। रचनाओंमें दृष्टिगोचर होनेवाले उपमान आपकी व्युत्पत्तिको बतलाते है तो व्याख्याएँ, आलोचनाएँ आपकी प्रतिभाको। हृदयके साथ-साथ मस्तिष्कको भी स्पन्दित कर देनेमें आप सिद्धहस्त है। टेकनीकपर पूर्ण अधिकार होनेके कारण कहानियोंमें विविधता ला देनेमें आप समर्थ हैं।

भरद्वाज, धनिकोण्ड, अनिसेट्टि आदि लेखकोंकी गणना यथार्थवादी लेखकोंमें की जाती हैं। श्री एन. आर. चन्दूर और श्रीमती मालती चन्दूरकी कहानियोंका भी विशिष्ट स्थान है। मधुरान्तकम राजाराम, शण्डिल, बलिवाडा कान्ताराव, अमरेन्द्र, पोतुकूचिसाम्बशिवराव, भास्कर भट्ल कृष्णाराव, इसुकपल्लि दक्षिणामूर्ति आदि अन्य प्रसिद्ध कहानीकार है। श्री मुल्लपूडि वेंकटरमण हास्यरस प्रधान कहानियाँ लिखनेमें प्रसिद्ध है। आजकल आप 'राजकीय बैताल पञ्चविंशति' नामसे आजकी राजनीतिपर व्यंग्यपूर्ण कहानियाँ लिख रहे हैं।

श्रीमती वासिरेड्डी सीतादेवी, इल्लिंदल सरस्वती देवी, श्रीमती (डॉक्टर) श्री देवीने भी अच्छी कहानियाँ लिखी हैं। नन्दगिरि इन्दिरादेवी, यद्दनपूडि सुलोचना रानी, जानकी रानी आदि लेखिकाएँ अभी-अभी इस क्षेत्रमें प्रवेश कर रही हैं। इनका भविष्य उज्ज्वल दिखाई देता है।

यूरोपीय और अन्य भारतीय भाषाओंकी अनेक श्रेष्ठ कहानियोंके सुन्दर अनुवादोंसे तेलुगुका कथा-साहित्य सम्पन्न हो चुका है। बंगलाके शरत्चन्द्र और हिन्दीके प्रेमचन्दसे तेलुगुके कहानी साहित्यके पाठक अत्यधिक प्रभावित रहे हैं।

जीवनियाँ :

तेलुगुमें आत्मकथाएँ और जीवनियाँ भी अधिक संख्यामें लिखी गई हैं। वीरेशलिंगम पन्तुलु और चिलकमर्ति लक्ष्मीनरसिंहारावकी आत्मकथाएँ, उनके जीवनकी विशेषताओंके अतिरिक्त, उस समयकी सामाजिक एवं साहित्यिक प्रवृत्तियोंका परिचय देनेवाली है। 'आन्ध्र-केसरी' टंगुटूरि प्रकाशम पन्तुलु, कोण्डा वेंकटप्पय्य पन्तुलु, अय्यदेवर कालेश्वरराव जी आदिकी आत्मकथाएँ साहित्यमें ही नही, आन्ध्रके काँग्रस आन्दोलनके इतिहासमें विशेष स्थानकी अधिकारिणी है। वेटूरि प्रभाकर शास्त्रीजीकी 'प्रज्ञा प्रभाकरमु' वैसे शुद्ध आत्मकथा नहीं, पर उनके तात्विक जीवनकी अनेक विशेषताओंपर प्रकाश डालनेवाली है।

वीरेशलिंगम पन्तुलु और चिलकमर्तिजीने कई सुन्दर जीवनियाँ लिखी हैं। स्वामी चिरन्तनानन्दकी, रामकृष्ण और विवेकानन्दकी जीवनी विशेष उल्लेख्य हैं। इनके अतिरिक्त और भी कई महान व्यक्तियोंकी जीवन-कथाएँ लिखी गई है।

आलोचना :

आलोचनात्मक साहित्यके जन्मदाता भी श्री वीरेशलिंगम ही है। 'आन्ध्र कवुल चरित्र' हिन्दी साहित्यमें 'मिश्रबन्धु विनोद' के समान ही आन्ध्र साहित्यके सभी प्राचीन साहित्यकारोंकी जीवनी एवं रचनाओंपर प्रकाश डालती है। गुरजाडा श्रीराम मूर्तिकी 'कवि जीवितमुलु' भी ऐसी ही रचना है। इतर उल्लेख्य रचनाओंमें कट्टमञ्चि रामलिंगारेड्डीजी (Sir C. R. Reddy) का 'कवित्व-तत्त्व-विचारमु', पेण्ड्याल वेंकट सुब्रह्मण्य शास्त्रीजीका 'महाभारत चरित्रमु', अनन्तकृष्ण शर्माजीका 'वेमना' और 'सारस्वतालोकमु', पुटपर्ति नारायणाचार्यका 'प्रबन्ध नायिकाएँ', विश्वनाथ सत्यनारायणजीका 'नन्नयकी प्रसन्न कथा-कलितार्थयुक्ति', कोराड राम-कृष्णय्यजीका 'महाभारत कविता विमर्शनमु', वेटूरि प्रभाकर शास्त्रीजीका 'शृंगार श्रीनाथमु' आदि ग्रन्थ है। साहित्यके इतिहासोंमें कल्लूरि वेंकट नारायणरावका 'संग्रह आन्ध्र-वाङ्गमय चरित्रमु' टेकुमळ्ळ अच्युतरावका 'विजयनगर साम्राज्यका आन्ध्र वाङ्गमयमु', कुरुगण्टि सीतारामय्यका 'नव्यांध्रसाहित्यवीथुलु', नेलटूरि वेंकट रमणय्यका 'दक्षिणान्ध्र कवित्व चरित्रमु' निडदवोलु वेंकटरावजीका 'दक्षिणान्ध्रकबुल चरित्र' उल्लेखनीय है। अनुसंधानात्मक ग्रन्थोंमें श्री बी. रामराजुका 'जानपद

वाङ्गमयमु', श्री दिवाकर्ल वेंकटावधानीका 'नन्नययुग', श्री के. वी. रामकोटि शास्त्रीका 'तिक्कनः कवित्व और वेदान्त', श्री के. वीरभद्रावका 'आन्ध्र साहित्यपर अँग्रेजीका प्रभाव' उल्लेख योग्य हैं। तेलुगु भाषाकी उत्पत्ति और विकासपर डॉ. चिलुकूरि नारायणराव, डॉ. गण्टि जोगिसोमयाजि, कोराड रामकृष्णय्या, वज्झल चिन सीताराम स्वामी शास्त्रीके ग्रन्थ श्रेष्ठ हैं; किन्तु तेलुगुमें आलोचनात्मक साहित्य, सर्जनात्मक साहित्यकी अपेक्षा बहुत कम है।

हैदराबादमें स्थित 'आन्ध्र सारस्वत परिषद्' ने भी कई अच्छे ग्रन्थोंका प्रकाशन किया है, जिनमें सुरवरपु प्रताप रेड्डीका 'आन्ध्रोंका सामाजिक इतिहास' 'महाभारत-भागवतपर विभिन्न विद्वानोंके भाषण','आन्ध्र वाङ्गमय चरित्र', सन्निधानम सूर्यनारायण शास्त्रीजीका 'काव्यालंकार संग्रह विवरण' मुख्य हैं।

निबन्ध रचनामें पानुगण्टि लक्ष्मीनरसिंहारावके 'साक्षी' के छह भाग, (जो एडिसनके स्पेक्टेटरके समान व्यंग्यात्मक एवं आलोचनात्मक हैं।) मुट्नूरि कृष्णारावजी (कृष्णा पत्रिकाके प्रसिद्ध सम्पादक) के विविध निबन्ध, कोमराजु, लक्ष्मणरावजीके 'लक्ष्मणराय निबन्धावलि', 'मल्लम्पल्लि सोमशेखर शर्माजीके ऐतिहासिक प्रधान लेख, कोराड रामकृष्णय्याजीके भाषा और साहित्यपर लेख प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त 'भारती', 'आन्ध्र पत्रिका' आदि विभिन्न पत्र-पत्रिकाओंमें समय-समयपर काफी अच्छे लेख प्रकाशित होते रहते हैं।

इस प्रकार तेलुगु साहित्य गौरवकी गरिमासे सम्पन्न विश्व-साहित्यके इतिहासमें अपने विशिष्ट स्थानका अधिकारी बना हुआ है।

● ● ●

काट्टरि वेंकटेश्वरराव
और
पिंगलि लक्ष्मीकान्तम

[कवि-परिचय]

काट्टूरि वेंकटेश्वरराव
और
पिंगलि लक्ष्मीकान्तम

• • •

तेलुगु साहित्यके इतिहासमें दो कवियों द्वारा रचा गया काव्य 'प्रबोध-चन्द्रोदयमु' है। यह पद्य-काव्य नन्दि मल्लय तथा घण्ट-सिंगन (१५वीं शतीका उत्तरार्ध) नामक दो कवियों द्वारा रचा गया। एक कवि एक चरण कहता तो दूसरा कवि दूसरा चरण—इस प्रकार समग्र काव्यकी रचना होती थी। इस कवियुगम्मके बाद तेलुगु-साहित्यके आधुनिक कालमें कई कवियुग्मोंके दर्शन होते हैं। इन कवियुग्मोंमें तिरुपति-वेंकट कवुलु, वेंकट-रामकृष्ण कवुलु, वेंकट-पार्वतीश्वर कवुलु, देवुल पल्लि बन्धु आदिके नाम लिए जा सकते है। इस प्रकार दो कवियोंके मिलकर, एक कविके समान कविता करनेकी प्रथा, शायद आन्ध्र प्रदेशमें ही प्रचलित है। यह बड़ी ही कठिन साधना है। काव्य-लिखना ही नहीं, अवधान * करते समय

---

* अवधान दो प्रकारके होते हैं, अष्टावधान और शतावधान। 'शतावधान' में सौ लोगोंको, उनकी इच्छापर (विषय और वृत्त), संस्कृत और तेलुगुमें, क्रमसे सौ आशु पद्योंके प्रथम चरण कहना और अन्तमें पूरे सौ पद्योंको फिर सुनाना पड़ता है। 'अष्टावधान' में चार-पाँचको आशु कविता सुनाना, शास्त्र चर्चा या आकाश पुराण घण्टियोंको गिनना, शतरञ्ज आदि आठ कामोंमें चित्तको, एक ही समय एकाग्र रखना पड़ता है।

सैकड़ों दर्शकोंके समक्ष, ८ या १०० पृच्छकोंको, उनकी इच्छापर विभिन्न विषयोंपर आशु कविता रचकर सभी पद्योंको क्रमसे सुना देता था यह कवियुग्म। इन कवियुग्मोंमें श्री तिरुपति-वेंकट कवलु (दिवाकर्ल तिरुपति शास्त्री और चेळ्ळपिळ्ळ वेंकट शास्त्री) अति प्रसिद्ध हैं। आधुनिक तेलुगु कवियोंमें उनके बहुतसे प्रत्यक्ष शिष्य हैं तो कई परोक्ष। एक प्रकारसे आधुनिक-तेलुगु-काव्यसाहित्यके वे ऐसे सूर्य हैं जिनके प्रकाशमें नव चैतन्य फैल पड़ा।

इस कवियुग्मके लब्धप्रतिष्ठ शिष्योंमें 'पिंगलि-काटूरि-कवि' हैं। एक श्री पिंगलि लक्ष्मीकान्तमजी हैं तो दूसरे काटूरि वेंकटेश्वरराव हैं।

श्रीकृष्णदेवरायलुके दरबारके सुप्रसिद्ध कवि पिंगलि सूरन्नके वंशके हैं लक्ष्मीकान्तमजी। लक्ष्मीकान्तजीका जन्म कृष्णा जिलेके चल्लपल्लि तालुकेके 'आर्तमुरु' नामक गाँवमें १० जनवरी सन् १८९४ को हुआ था। आपकी माताका नाम कुटुम्बम्मा तथा पिताका नाम श्री वेंकटरत्नम है।

वेंकटेश्वररावजीका जन्म कृष्णा जिलेके 'काटूर' नामक ग्राममें १५ अक्टूबर १८९५ को हुआ था। आप श्री वेंकटकृष्णय्याके पुत्र थे, पर अपने छोटे दादाको गोद दिए गए थे। जहाँ आप दत्तक दिए गए थे, उन दत्तकके नाम (माता-पिता) लक्ष्मम्मा और कोण्डय्या थे।

लक्ष्मीकान्तमजीके पिता चल्लपल्लि जमींदारीके 'आमुदार्लका' में गाँवके मुखिया बने जीवनयापन करते थे। लक्ष्मीकान्तमजीने मैट्रिक तक मछलीपट्टणम् के हिन्दू हाइस्कूलमें और एफ. ए. (इण्टर) और बी. ए. वहींके नोबेल कालेजसे किया। १९०९में जब आप ८वीं कक्षामें पढ़ रहे थे, तब तिरुपति-वेंकट कवियोंने मछलीपट्टणम्में शतावधान किया। उसे देखते ही लक्ष्मीकान्तमजीमें कविता करनेकी इच्छा पैदा हुई। उसके बाद वेंकट शास्त्रीजीसे आशीर्वाद प्राप्तकर आप लगभग तीन वर्ष तक गुरुजीके यहाँ रहे। वहाँ आपने संस्कृत और आन्ध्र भाषाओंका अच्छा अध्ययन किया।

सन् १९१९ में बी. ए. पास करनेके बाद आपकी नियुक्ति नोबिल पाठशालामें आन्ध्र भाषाके अध्यापकके पदपर हुई थी। चार वर्षके बाद आप उसी कालेजमें प्राध्यापक बने। पुनः चार वर्ष बाद आप मद्रास विश्वविद्यालयके रिसर्च 'फेलो' बने। तीन सालके बाद तञ्जाऊरके सरस्वती महल-ग्रन्थकालयमें बैठकर आपने कई प्राचीन ताल-पत्र ग्रन्थोंका अध्ययन किया। आपने १९३० में मद्रास विश्वविद्यालयसे एम. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। सन् १९३१ में आप आन्ध्र विश्वविद्यालयके तेलुगु विभागके आचार्यके पदपर नियुक्त हुए। वहाँसे अवकाश ग्रहण करनेके पश्चात् छह-सात वर्ष आप आकाशवाणीके विजयवाड़ा केन्द्रमें संस्कृत विभागके निरीक्षक रहे। आजकल आप तिरुपतिके वेंकटेश्वर विश्वविद्यालयमें तेलुगु विभागके अध्यक्ष एवं प्रोफेसरके पदपर हैं। ६८ वें वर्षमें इस पदपर नियुक्त होना आपकी विद्वत्ता और योग्यताका ज्वलन्त प्रमाण है। आप केन्द्रीय-साहित्य-अकादमीके भी सदस्य है।

तञ्जाऊरमें प्राप्त 'द्विपद-भारत' का आपने सुष्ठु सम्पादन किया और उक्त ग्रन्थको अपनी एक विद्वत्तापूर्ण भूमिकाके साथ, आन्ध्र विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित करवाया है। श्री वेटूरि प्रभाकर शास्त्री द्वारा सम्पादित 'रंगनाथ रामायणमु' के लिए लिखी भूमिका लक्ष्मीकान्तमजीकी विद्वत्ताको प्रदर्शित करनेवाली है। 'मधुर पण्डित-राज्यमु' इनकी एक सुन्दर कृति है। जिसमें पण्डितराज जगन्नाथके सुन्दर श्लोकोंका सरल व सरस अनुवाद प्रस्तुत किया है। 'गौतमी व्यासमुलु' आपके साहित्यिक एवं आलोचनात्मक लेखोंका संग्रह है। इनके अतिरिक्त आपने कई पुस्तकोंके लिए भूमिकाएँ लिखीं और विभिन्न पत्र-पत्रिकाओंमें, समय-समयपर कई पाण्डित्यपूर्ण लेख भी लिखे हैं। आकाशवाणीमें रहते समय, आपने संस्कृतके लगभग सभी नाटकोंके रेडियो रूपक प्रसारित किए हैं। युवावस्थामें सफल अभिनेताके रूपमें भी आप प्रसिद्ध थे।

वेंकटेश्वररावके पूर्वजोंके घरका नाम 'कलपटपु' था, पर जबसे वे 'काटूर' में आकर बस गए, तबसे 'काटूरि' कहलाए। बचपनमें ही आपको आपके छोटे दादाने गोद ले लिया था। आपकी प्रारम्भिक पढ़ाई तो काटूरमें ही हुई। ८ वीं कक्षा तक गुडिवाडामें पढ़कर, वहाँसे आप मछलीपट्टणम् पहुँचे। वहाँ आपको लक्ष्मीकान्तमजीकी अच्छी संगति प्राप्त हुई और चेळ्ळपिळ्ळ वेंकटशास्त्रीकी सेवाका सुअवसर प्राप्त हुआ।

स्वयं कविके शब्दोंमें सुनिए:—

पिंगळि कान्त सुकवि तो
संगातम्मु, चेळ्ळपिळ्ळसद्गुरुकृप न
न्नुँ गविमात्रुनि गाविं
चें; गोंडोक पद्यरचन चेतु जपलतन्।'

[सुकवि पिंगलि लक्ष्मीकान्तकी संगति और गुरुवर चेळ्ळपिळ्ळ वेंकटशास्त्रीजीकी कृपाने ही मुझे कवि बनाया है। इसीके परिणामस्वरूप कुछ कविता करके मैं अपनी बुद्धिकी चपलता ही दरसाता हूँ।]

आप सन् ३९ से ४३ तक मछलीपट्टणम् स्थित नेशनल कालेजके प्रिन्सपाल बने रहे। उसके बाद आपने आन्ध्रकी प्रसिद्ध साप्ताहिक 'कृष्णा पत्रिका' के सम्पादनका भार सम्हाला। सन '५२ तक सफलतापूर्वक उस कार्यको निभाया।

लक्ष्मीकान्तमजी और वेंकटेश्वररावजी ऐसे कवियुग्मके शिष्य हैं, जिन्होंने अपने काव्यको, किसी एकके लिखनेपर भी उसे 'तिरुपति-वेंकटीय' ही माना है, उसी परम्पराके अनुकूल इन्हें भी 'लक्ष्मीकान्त-वेंकटेश्वर कवि' या 'पिंगलि-काटूरि कवि' होना चाहिए था। पर प्राचीन सम्प्रदायके अनुरूप कुछ काव्य तो इन दोनों कवियोंने मिलकर लिखे हैं। उनपर नाम तो अलग-अलग ही लिखे गए है। 'तोलकरि', 'मुक्तक-संग्रह','सौन्दरनन्दमु' आदि काव्य दोनोंने मिलकर लिखे हैं और कुछ काव्य

और रचनाएँ अलग-अलग लिखी है। आपने अपनी रचनाओंमें परम्परा और गुरुओंपर श्रद्धा भावके साथ, अपने व्यक्तित्वको भी कायम रखा है। प्रस्तुत लेखमें श्री काटूरि-वेंकटेश्वररावजीपर ही लिखना है, फिर भी लक्ष्मीकान्तमजीके बिना वेंकटेश्वररावका पूर्ण परिचय नहीं दिया जा सकता। अतः दोनोंका परिचय और दोनोंके काव्यों (वेंकटेश्वररावजीकी रचनाओंके अतिरिक्त) से उद्धरण दिए गए है। इन दोनों कवियोंके संगमने कालान्तरमें बन्धुत्वका रूप धारण किया है। काटूरिजीकी बहनकी लड़की पिंगलिके सालेकी पत्नी है। पर इस सम्बन्धकी अपेक्षा उनका साहित्यिक संगम प्रगाढ़ है।

"ऊँचा कद, आजानु बाहु, गोरा शरीर, गम्भीर चेहरा, नोकदार नाक, घनी सफेद मूँछें, मोटे फ्रेमका चश्मा, घनी भौहें, छोटे-छोटे केशोंसे युक्त गञ्जा सिर, हाथमें ताड़की बनी छड़ी, पाँवोंमें पण्डिताऊ चप्पल, खादीका कुर्ता, कन्धेपर काश्मीरी शाल या धारीदार खादीका उत्तरीय, मुँहमें कीमती तमाखूका लम्बा-पतला चुरुट—संक्षेपमें यह काटूरिजीके बाह्य स्वरूप एवं उनकी वेशभूषाका वर्णन है।"

—(वे. राधाकृष्णमूर्ति)

२०वीं शतीके प्रारम्भमें मछलीपट्टणम् आन्ध्रकी साहित्यिक अवं राजनैतिक चेतनाका केन्द्र बना हुआ था। स्व. पट्टाभि सीतारामय्या, मुट्नूरिकृष्णराव, वेंकट-शास्त्री जैसे प्रसिद्ध व्यक्ति उसी नगरमें रहा करते थे। वहींपर काटूरिजीके जीवनका अत्यधिक भाग बीता। आपका जन्म चूँकि एक धनी परिवारमें हुआ था, अतः आपके सामने आर्थिक समस्या कभी नही रही। असहयोग-आन्दोलनमें भाग लेनेके कारण आपने पढ़ाई छोड़ दी। सन् १९३० के सत्याग्रहमें जेलकी हवा भी खा आए। आपकी रचनाओंपर गाँधीवादका प्रभाव है। राजनीतिके बाद साहित्य जगत ही उनका सर्वस्व बन गया। 'कृष्णा' पत्रिकाका सम्पादन करते समय, आन्ध्र प्रदेशके कई नगरोंमें साहित्यिक भाषण देकर आपने अपनी विद्वत्ता एवं प्रभावशाली भाषासे लोगोंको मुग्ध कर लिया था। १९४५ में नव साहित्य परिषदके तेनाली अधिवेशनमें सभा-पतिके पदसे काटूरिजीने जो भाषण दिया, उसका साहित्यमें एक विशिष्ट स्थान है।

रचनाओंके परिणामकी दृष्टिसे काटूरिजीकी कविताओंकी संख्या अधिक नहीं है। पर आपने जो कुछ भी लिखा, उसने साहित्यमें अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है। काटूरिजीकी अपनी निजी कृतियाँ 'पौलस्त्य हृदयमु', 'गुडिगण्टलु' (मन्दिरकी घण्टियाँ), 'मावाळ्ळु, माऊरू' (मेरे लोग, मेरा गाँव) है। इनके अतिरिक्त समय-समयपर पत्रिकाओंमें प्रकाशित कविताएँ हैं। 'पिंगलि-काटूरि' कवियुगके नामपर १९२३ में 'तोलकरि' (प्रथम वर्षाके दिन) नामक कविता-संग्रह प्रकाशित हुआ। आन्ध्र साहित्यमें इस कविद्वयको अमरकीर्ति देनेवाला काव्य 'सौन्दरनन्दमु' है, जिसका प्रकाशन सन् १९३४ में हुआ था। यह काव्य श्री वेंकटशास्त्रीकी षष्ठि-पूर्तिके समारोहके समय गुरु-दक्षिणाके रूपमें, उनके चरणकमलोंमें समर्पित किया गया था। मछलीपट्टणम्के नागरिकोंके जीवनमें तिरुपति-वेंकट कवियोंके प्रति श्रद्धा-भक्तिसे

प्रेरित, लोगों द्वारा सम्पन्न यह समारोह आन्ध्र साहित्यके इतिहासमें ही एक रमणीय एवं अविस्मरणीय घटना है। इस समारोहमें कई कविशिष्योंने काव्यके उपहारोंके रूपमें अपनी गुरु-दक्षिणा चुकाकर, अपनेको धन्य माना। इस प्रकार समर्पित 'सौन्दर-नन्दमु' तेलुगु-शारदाकी सेवामें प्रस्तुत अपूर्व कुसुम है :—

पुडमिरेडुलु तललडुगुल मोवंग
नर्पिचु कान्क नंदुवाडु,
अत्यद्भुतंबैन यवधानविद्यकु
ब्रभवकारणमंन प्रतिभवाडु
वीनुदोयिकि देने सोनलु वर्षिचु
वाङ्माधुरिकि बेरु वडिनवाडु,
चिननाडे वलचि वच्चिन कविताकन्य
नेक पत्निग जेसि येलुवाडु,
पूर्णकामुं त्यागियु भोगियैन
गुरुनि ऋणमीगुपोंटेनी चिरुत कब्ब
महंत गंडिचुकोनुगाक यान्ध्रवाणि
कडकनुल जाल्कोनु प्रसादकणलवाप्ति।

[चरणोंमें नत राजाओंके सादर समर्पित भेंटको स्वीकार करनेवाले,
अवधान नामक आशुकविता-पाठका क्रम प्रचलित करनेवाले,
कानोंमें मधु बरसानेवाले वाङ्माधुर्यके लिए प्रसिद्ध,
बचपनमें ही वरण कर आनेवाली कविता-कन्यापर एक-पत्नी सम शासन करनेवाले,
पूर्ण काम, त्यागी और भोगी जो हमारे गुरु है,
उनके ऋणसे उऋण होनेके लिए यह छोटा-सा काव्य, आन्ध्र-सरस्वतीके नयन-कोरोंका प्रसाद प्राप्तकर साधन बनें।]

'पौलस्त्य हृदय', 'गुडिगण्टलु', 'मेरे लोग, मेरा गाँव' इन तीन कविता-ओंको एक संग्रहके रूपमें प्रकाशित किया गया है। इस काव्य-संग्रहको कविने अपने बड़े भाई स्वर्गवासी रामकृष्णय्याजीकी दिव्य स्मृतिमें समर्पित किया है। 'घर-गृहस्थी' बाल-बच्चे, खेती-बाड़ी किसीपर ध्यान दिए बिना घुमक्कड़ बने घूमते रहनेवाले इस छोटे भाईका बड़े भाईने बिना किसी शिकायतके लालन-पालन किया था।

'नेनु' शीर्षक प्रथम कवितामें, कविने बड़ी विनम्रताके साथ अपना परिचय दिया है। इन पंक्तियोंको पढ़नेसे कविकी नम्रताका ही नहीं, अपितु सहृदयता एवं ईमानदारीका भी पता चलता है।

'मेरे लोग, मेरा गाँव' शीर्षक कवितामें पितृ-ऋणसे मुक्त होनेके लिए, काटूरिजीने अपने वंशका और अपने ग्रामका हृदयंगम वर्णन किया है। उन्होंने कहा है:—

अप्रयत्नम्मुगा नाकु नब्बिनट्टि
कवनलेशम्मु मद्वंशकथनमुन गृ
तार्थमगु नंचु, नद्दान दलगुबो पि
तृणभारम्मटंचु नूहिंचिकोंटि।'

[सहज हीमें प्राप्त थोड़ी-सी कविता करनेकी सामर्थ्यको अपने वंशकथनसे कृतार्थ बनाना चाहा। यह भी सोचा कि इससे पितृ-ऋणसे उऋण हो सकूँगा।]

इस प्रकार इस कविताके अन्तर्गत कविने अपने परिवार और अपने बन्धु-बान्धवोंका काव्यमय परिचय दिया है। 'काटूरु' ग्राममे आनेसे पहले इनके घरका नाम* 'कलपटपु' था। काटूरमें आकर नूजिवीडुके राजाके आदेशानुसार उस गाँवमें पटवारीके पदका निर्वाह करते रहे, तबसे 'काटूरि' कहलाए। इस कवितामें गाँवके परिवारवालोंकी आपसी मित्रता, सौजन्यता और सौहार्दका सुन्दर वर्णन किया है। यह वर्णन न केवल उनके परिवार तक सीमित है, अपितु पाश्चात्य प्रभावके सम्पर्कमें न आनेवाले प्रत्येक भारतीय आदर्श परिवारके लिए लागू होता है।

प्रस्तुत कवितामें 'शाखा चंक्रमण' मानते हुए भी 'हृदयमें उमड़नेवाली वेदनाके मारे' गाँवकी प्राचीन दशा, सम्प्रदाय, प्रथाएँ और वर्तमान परिस्थितियोंका प्रभावशाली चित्रण किया है। इस कवितामें प्राचीन गाँवोंकी सम्पन्नता, सम्मिलित प्रयास, परस्परके सौमनस्यके साथ वर्तमान अवनति, स्वार्थपरायणताका हृदयद्रावक वर्णन किया गया है। कविके पूर्वज आन्ध्र साहित्यमें 'प्रबन्धपरमेश्वर' और 'शम्भुदास' के नामसे प्रसिद्ध 'एर्रन' के वंशज थे। ये लोग पहले 'चदल्वाडा' में रहते थे, वहाँ से 'कलपटमु' और फिर 'काटूरु' पहुँच गए। यह गाँव पहले बहुत गरीब दशामें था। लेकिन अँग्रेज शासकोंके कृष्णा नदीपर (विजयवाड़ाके पास) बाँधका निर्माण करते ही, उस प्रान्तकी कायापालट हो गई। भूमि उपजाऊ बनी और सोना उगलने लगी। कृष्णाकी नहरोंसे पानी 'काटूरु' तक पहुँचा। इस तरहसे मानों किसानोंका पुण्य प्रवाह ही नहरोंसे होकर बहने लगा हो। फलतः काटूरु अब लक्ष्मीका निवास बन गया। इस गाँवके सभी कुलवाले मिलजुलकर रहते और गाँवकी उन्नतिमें बिना किसी भेदभावके हाथ बँटाते। कविने प्रातःकालमें नींदसे जागनेवाले गाँवका बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है। चारों वर्णोंके लोग आपसमें एक परिवारके लोगों-जैसा बर्ताव करते। सचमुच यह देखकर आश्चर्य होता है कि उस समयकी और आजकी परिस्थितियोंमें कितना अन्तर आ गया है!

---

*आन्ध्रमें प्रत्येक परिवारका अपना एक वंश नाम होता है, जिसे 'घरका नाम' (Surname) कहते हैं। प्रत्येक व्यक्तिके नामके पहले वंशका नाम जोड़नेकी प्रथा है।

पल्ले ब्रतुकुल माधुर्यमेल्ल विरिगि
पंचकोलकषाय मुप्पतिलनेल ?

[ग्रामीण जीवनका वह सारा माधुर्य बिगड़ गया और हाय ! यह पञ्चमेल-कषाय कहाँसे टपक पड़ा ?]

उस समयके लोग पाप कर्म न करते रहे हों, ऐसी बात नहीं है, पर उस पापको तरह-तरहके सिद्धान्तोंकी आड़में छिपाना या उसीको पुण्य कर्म सिद्ध करना उन्हें न आता था। भारतीय ग्रामीण जीवनके आदर्श ही क्रमशः अवनत होते गए—इसे देखकर कविका हृदय व्यथित हो उठा और उन सुखमय दिनोंका स्मरण कर कविका कोमल हृदय द्रवित हो उठा।

इस प्रकार कवितामें पारिवारिक जीवनकी गरिमा, भारतीय जीवनके आदर्श और विशेष रूपसे आन्ध्रके ग्रामीण और पारिवारिक जीवनका प्रभावशाली वर्णन किया गया है।

इस तथ्यमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि श्रीरामचन्द्र आन्ध्र जातिके प्रियतम भगवान हैं और उनकी गाथा परमगेय रही है। क्या साहित्यमें, क्या दैनिक जीवनमें—जहाँ सुनिए, वहीं वह पवित्र नाम प्रतिध्वनित होता सुनाई पड़ेगा। रामचन्द्रजीने वनवासके चौदह वर्षोंकी अवधिका अधिकांश भाग, आन्ध्र प्रदेशमें दण्डकारण्य और गोदावरीके किनारोंपर ही बिताया था। उस पावन-स्मृतिको जागृत करनेवाले अनेक स्थान और चिह्न, आन्ध्र देशमें यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होते हैं। मर्यादा-पुरुषोत्तमकी पुनीत गाथा गानेवाले महानुभावोंसे आन्ध्र-साहित्य भरा पड़ा है। काटूरिजीने भी रामकी गाथाको एक नए रूपमें गाया है।

पाश्चात्य प्रभावके कारण हमारे देशके कई मनीषियोंने पौराणिक गाथाओंको नए रूपमें देखने और चित्रित करनेका प्रयास किया है। इनमें बंगालके माइकेल मधुसूदन दत्तका नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। पर इन लेखकोंने भारतीय संस्कृतिकी विचार-धाराके विरुद्ध कुछ कल्पनाएँ की हैं, कुछ काव्य रचे है ; पर काटूरिजीके रावणका चरित्र, भारतीय विचारधाराके अनुकूल ही है। रावणके पिता पुलस्त्य परम निष्ठावान और ज्ञानी थे। वे तो साक्षात् 'ब्रह्मा' थे। ऐसे पुलस्त्यका पुत्र है रावण। उसका हृदय अपने पिताके आत्मज्ञानसे प्रदीप्त था। कविने 'पौलस्त्य हृदय' नाम रखकर ही, काव्यके इस पहलूपर पाठकोंकी दृष्टि आकर्षित की है।

रावण विष्णु भगवानके उन परमभक्तोंमेंसे था, जो वैरभावसे तीन जन्मोंमें ही भगवानके सान्निध्यकी प्राप्तिका उत्कट अभिलाषी था। पुराणोंके अनुसार रावणके जन्मका वृत्तान्त इस प्रकार है। सनकसनन्दन आदि ब्रह्मर्षि एक बार भगवानके दर्शन करने वैकुण्ठ पहुँचे तो जय-विजय नामक द्वारपालोंने उन्हें अन्दर जानेसे रोका। ऋषियोंने क्रुद्ध होकर शाप दिया कि तुम दोनों पृथ्वीपर जन्म लो। जय-विजय दोनों गिड़गिड़ाने लगे, इतनेमें भगवान भी आए। तब ऋषियोंने शाप विमोचनका

मार्ग बतलाया। भक्त बनकर नौ जन्मोंमें या विरोधी बनकर तीन जन्मोंमें, वैकुण्ठको वापस आ सकते हो। भगवत्-सान्निध्यमें विलम्बको न सह सकनेवाले उन भक्तोंने तीन ही जन्मोंमें, अर्थात् विरोधी बनकर ही, लौट आनेकी इच्छा प्रकट की। प्रथम जन्ममें वे हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु बने और दूसरे जन्ममें रावण और कुम्भकर्ण और तृतीय जन्ममें शिशुपाल और दन्तवक्र। उन्हें तो भगवानके हाथों मरना था। और भगवान निरपराधियोंको मारते कैसे? अतः उन्होंने खूब जी खोलकर पाप किए, जिससे स्वयं भगवानको वैकुण्ठ छोड़कर पृथ्वीपर अवतार लेकर उन्हें मारना पड़ा।

इस दृष्टिकोणसे काटूरि वेंकटेश्वरावजीकी रचनाओंमें रावणके चरित्रका बड़ा ही सुन्दर चित्रण किया गया है।

वरुण (समुद्र) द्वारा रामचन्द्रजीके आगमनकी बात सुनकर रावण प्रसन्न होकर कहता है:—"कितने दिनोंके बाद उस राघवकी मुझपर कृपा हुई? बीसों आँखें रहनेका फल कितने दिनोंके बाद मिला?" अन्तमें वह कहता है:—

....पौलस्त्युंडु, सिरिकोल्वु
चविकयौ वक्षम्मु चन्द्रहास
दारितमोनर्चि, आ गंटुदारिवेंट
हृदयमुन् जोच्चि, येकान्तमिच्चींगचि
स्वागतमु बल्कुननि विन्नपमुसल्पु
मचटने पुनर्दशनमगुत मनकु।

[लक्ष्मीके निवासस्थान विष्णुके वक्षस्थलको चन्द्रहाससे छेदकर, उस छेदमेंसे हृदयमें प्रवेशकर, वहाँ भगवानसे एकान्त प्राप्त करनेका इच्छुक है यह पौलत्स्य। और वहीं उनका स्वागत करेगा। यह मेरी विनती जाकर सुना दो। वहीं फिर मिलन होगा।]

भीषण वैरको अपनानेवाले रावणका ऐसा हृदयग्राही चित्रण किसी रामायण-कारने नहीं किया है। 'पौलस्त्य हृदय' की यह कविता नवीन कल्पनाका उज्ज्वल उदाहरण है।

'कलियुगी वैकुण्ठ' माने गए तिरुपतिकी पर्वत श्रेणियोंपर विलसित वेंकटेश्वर (बालाजी) के प्रति आन्ध्र जनताके भक्ति पारावारकी कोई सीमा नहीं। उन सातों पहाड़ोंपर पैदल जानेवाले, घुटनोंके बल चढ़नेवाले, भगवानके सामने लोटते हुए प्रदक्षिणा करनेवाले, सर्वस्व समर्पण करनेवाले (उफ्, उस दृश्यको देखकर हृदय और शरीर दोनों पुलकित हो जाते हैं!) भक्तगणकी पुकारको सुन दौड़ पड़नेवाले उस भगवानके दर्शनार्थ अत्यन्त भक्तिभावसे वहाँ जाते हैं। 'गुडिगण्टुलु' (मन्दिरकी घण्टियाँ) नामक कवितामें कविने श्री वेंकटेश्वरके प्रति अपने हृदयोद्गार इस प्रकार प्रकट किए है :—

नगम मूलमंत्रमुलु,
नादिमुखम्मुलु विश्वसृष्टिकिन्,

योगिसमाजमानसगुहोदित
मंगळदीपिकारुचुल्,
सागरकन्यका हृदयसारस
षट्पदगीतिकारुतुल्
नीगुडिगंट सव्वडुलुनिगि
चेलगे प्रबुद्धलोकमुल् ।

[आपके मन्दिरकी घण्टियोंकी ध्वनियाँ जो विश्वसृष्टिकी नांदी रूप निगमोंके मूलमन्त्रोंके समान, योगी समाजके मानसरूपी गुफाओंमें उदित मंगल दीपोंकी कान्तियोंके समान, सागर-कन्या (लक्ष्मी) के हृदयरूपी सारस (कमल) के भ्रमरके मधुगुञ्जारके समान हैं। वे आकाशमें फैल रही हैं, जिससे सारे लोक प्रबुद्ध (जागृत) हो रहे हैं।]

नीपादम्मुलु मोमुलनिलुपुचु,
नीपाटले पाडुचुन्
रेपुन्मापुनुनिं दलंचिकोनुचु
नीपेरु गानिंटिलो
दीपंबेत्तुचु नेटिकोळ्ळिडुदुरिते,
नेडु नी कोंडपै
रूपुं जूडग वच्चिनारु शरणार्थुल्
मोमु जूपिपवे ।

[तुम्हारे चरण-कमलोंको ही सिर-आँखों लगा, तुम्हारे गीत ही गाते हुए, शाम-सबेरे तुम्हारा ही स्मरण करते हुए, तुम्हारे नामपर घरमें दीप जलाते हुए, तुम्हारी विनती करते रहते है। आज ये शरणार्थी पर्वतपर चढ़, तुम्हारे दर्शनके लिए आए है। इन्हें अपनी मोहनी मूरत दिखा दो ना!]

अन्तमें कवि कहते हैं:—

कसवुन् जिम्मेद, नीरु जिल्केदन्
नीकल्याणगेहान, बा
नसमु जेसेद, गट्टियल्विरुतु,
गिजलु पोट्टुवो दंचेदन्
कुसुमान्नंबुलु वाचि नीकिडेद,
नंट्लुं दोमुदुन्, वीवनन्
विसरन्, बादमुलोत्त नाकिडवे
तंड्री जन्मजन्मालकुन् ।

[झाड़ू दूंगा, पानी छिड़क दूंगा। तुम्हारे कल्याण मन्दिरमें याचकका काम करूँगा, लकड़ियाँ तोड़ दूँगा। ठीक तौरसे धान कूट दूँगा। फूल जैसे चावल पकाकर तुम्हें खिलाऊँगा। तुम्हारे जूठे बरतन माँज दूँगा। तुमपर पंखा झलता रहूँगा। हे स्वामी! जन्म-जन्मोंमें, पैर दाबने और सेवा करनेके ऐसे अवसर दो।]

भगवानकी प्रार्थना करते हुए वे उनसे विनती करते हैं कि 'हरिजनों' की पुकारको भी सुनिएगा। हे स्वामी! अब तुम्हारा इन दीनोंपर ध्यान देना उचित है :—

एन्नेंड्लायेनो कोडंपै वेलसि
सामी ! नीवु, नित्यम्मु ना
पन्नुलु वत्तुरु, नीवुनित्तुवु गदा
भद्रम्मु; लीनाटि द
न्कन्नी वाकिलि द्रोक्कि, यी हरिजनुल्
कैसाचिरे ? वीरलं
जिन्नबुच्चुट दोड्ड वेलुपुल
किस्सी वन्नेयो, वासियो !

[हे स्वामी ! कितने वर्ष हो गए तुम्हें इस पर्वतपर अवतरित हुए ! रोज ही आपन्न तुम्हारे समीप आते हैं और तुम उनका कल्याण करते हो। आज तक इन हरिजनोंने क्या कभी तुम्हारी देहली पारकर हाथ पसारा है ? इतने बड़े देवता हो, उन्हें निराश करना, तुम्हें कहाँ तक शोभा देता है ?]

प्रगतिवादी कवितामें कवि, पद दलित जनताकी वकालत करता है। जो जोश-खरोश, वर्ग-विषमताकी निन्दाके स्वर सुनाई पड़ते हैं, वह इस गाँधीवादी कविकी रचनामें नहीं। गाँधीवादका प्रगति-मार्ग तो अहिंसापर आधारित है। कवि हरिजनोंके उद्धारके लिए भगवानकी करुणा और कृपाभावकी ही याचना करते हैं।

अब लक्ष्मीकान्तम और वेंकटेश्वररावजी द्वारा सम्मिलित रूपसे लिखे हुए काव्योंपर एक दृष्टि डालें, तो समुचित होगा।

दोनों कवियोंके नामपर 'तोलकरि' (प्रथम वर्षाके दिन) नामक ग्रन्थ सन् १९२३ में प्रकाशित हुआ है। यह विभिन्न विषयोंपर समय-समयपर लिखी हुई फुटकर कविताओंका संग्रह है। इस काव्य-संग्रहकी भूमिका आन्ध्रके प्रसिद्ध समालोचक और आन्ध्र विश्वविद्यालयके उपकुलपति स्व. सर. सी. आर. रेड्डीने लिखी है। उन्होंने लिखा है:—

"यह पुस्तक अनेक कविताओंसे विलसित सुकुमार पुष्पमञ्जरीके समान है। प्रत्येक कविताका रस सौरभ, आकार-विलास, वर्णन-शैली अनुपम और असाधारण है। प्रत्येक कविताकी शैली भी भिन्न है . . . . . ये कविताएँ भावगीतोंके नामसे (छायावादी कविता) हालमें प्रचलित नवीन कविता-संसारसे सम्बद्ध हैं। प्रकृति-वर्णन सुन्दर और सूक्ष्म भावसे समन्वित है। प्रकृतिकी चित्तवृत्तियोंका, मनुष्योंकी सहज अकृत्रिम चित्तवृत्तियोंके साथ सुन्दर समन्वय किया गया है। . . . . . ये कवि सचमुच स्वतन्त्र हैं। भारतीय और पाश्चात्य वाङ्मयके सारको ग्रहणकर तथा उस सारको आत्मसात् करके उसके आधारपर अपनी अनुभूतियोंको खूब लिख सकनेवाले हैं ये कवि ! "

इस पुस्तकमें 'कविताकी सामग्री', 'कविशिशु', 'कोकिल', 'संक्रान्ति', 'ज्वारका खेत', 'बिछोह', 'अज्ञानकृतम', 'रसाल', 'प्रथम बौर', 'तुम कौन हो', 'पिंजड़ेका सिंह' और 'रक्त-तिलक' शीर्षक बारह कविताएँ संग्रहीत है। इनमें कुछ कविताएँ प्राचीन शैलीपर लिखी गई हैं और कुछ नवीन शैलीपर। इन रचनाओंमें हमें प्राचीन और नवीन वर्णन-शैलीका सुन्दर समन्वय दिखाई देता है।

बौद्ध धार्मिक विचारोंको मनोहर काव्यमय रूप देनेवाले महाकवि अश्वघोषका संस्कृत साहित्यमें विशिष्ट स्थान है। अश्वघोष महान् कवि थे और साथ ही साथ बौद्ध धर्मपर अटल विश्वास रखनेवाले श्रमण भी। अतः आपकी रचनाओंमें, काव्यके आवरणमें धर्मोपदेशकी मात्रा अधिक है। इसी दृष्टिसे संस्कृत 'सौन्दरनन्द' की रचना हुई है। उसमें अतिकामुक नन्द (बुद्धके सौतेले भाई) के बौद्ध श्रमण होनेकी कथा वर्णित है। उसी मूलकथाका आधार लेकर पिंगलि-काटूरि कवियोंने तेलुगुमें 'सौन्दरनन्दमु'की रचना की है। इसकी गिनती आधुनिक कालके प्रसिद्ध खण्डकाव्योंमें की जाती है।

आमुखमें कवियोंने स्वीकार किया है कि संस्कृतके 'सौन्दरनन्द' का अनुकरण नाम-मात्रका है। सचमुच ही वह अनुकरण नाम-मात्रका ही रहा है। तेलुगु काव्य सभी दृष्टियोंसे मौलिक बन पड़ा है। कारण स्पष्ट है कि रचनाके उद्देश्यमें ही मतैक्य नहीं है। अश्वघोषका लक्ष्य बौद्ध-धर्मका प्रचार करना था* तो इन कवियोंने विश्व प्रेम, समाजसेवाके अतिरिक्त, कलापक्षपर भी अधिक ध्यान दिया है। सुन्दरी और नन्दके पारस्परिक और व्यक्तिगत प्रेमका बौद्धधर्म ग्रहण करनेपर विस्तृत और पुनीत विश्वप्रेममें परिणत होनेका वर्णन, बड़ा ही काव्यमय बन पड़ा है। प्राचीन कथा-वस्तुको लेकर सात सर्गोंके एक सुन्दर काव्यकी रचना की है पिंगलि-काटूरि कवियोंने।

प्रथम सर्गमें महात्मा बुद्धका नगर-प्रवेश और धर्म-प्रचारका वर्णन है। दूसरे सर्गमें, सुन्दरी और नन्दके कामुक क्रीड़ाओंमें मग्न रहते समय, बुद्धकी अपनी पुकारका जवाब न सुनकर लौट पड़ना, और अनिच्छापूर्वक ही नन्दका उन्हें बुलानेके लिए जाना वर्णित है। उस समयकी नन्दकी अवस्थाका सुन्दर चित्रण किया गया है :—

बुद्धगतमैन पेनुभक्ति मुन्दुलाग,
वेलदिपै रक्ति लागे वेन्वेनुक कतनि
नूमिकल मध्य हंस ना नोप्पेनपुड
निश्चयम्मुन गदलक निलुवकतडु

---

* प्रायेणालोक्यलोकं विषयरतिपरम्
मोक्षात्प्रतिहतम्, काव्य व्याजेन तत्त्वं कथितमिह ॥ —(अश्वघोष)

[बुद्ध-भक्ति बलवती, आगे ढकेले
कामिनीकी रक्ति, खींचे पीछे
लहरोंपर बैठे हंसकी नाईं
न आगे बढ़े, न पीछे हटे ।]

'भक्ति' और 'रक्ति'के अन्तर्द्वन्द्वमें फँसे नन्दको देखकर बरबस 'कुमार-सम्भव' की पार्वतीका ध्यान हो आता है।

तीसरे सर्गमें नन्दके निमन्त्रणको अनसुना करके, बुद्ध नन्दके हाथोंमें भिक्षापात्र देकर आगे बढ़ते हैं और विहारमें चले जाते हैं। बेचारा नन्द किंकर्तव्यविमूढ़ हो उनका अनुसरण करता है। वहाँ महात्मा बुद्ध थोड़ी देरतक धर्मोपदेश देते हैं :—

निर्दयी है मृत्यु
उसकी करामातका प्रतीकार है नहीं धरापर।
\+ \+ \+
जरा और रोग हैं दो घोर राक्षस
मृत्यु देवताके इशारोंपर नाचनेवाले।.....आदि।

तदुपरान्त वे अन्य भिक्षुओंको आज्ञा देते है नन्दको जबरदस्ती भिक्षु बना दें। बेचारे नन्दपर मानों गाज गिरी। भगवानके चले जानेपर, भिक्षु नन्दका सिर मुँड़ा देते है। इस सर्गका अन्तिम पद्य बड़ा सुन्दर बन पड़ा है :—

भिक्षुमंडलि चेजिक्कि, पेनुगुलाडि
वेडुकोनि, बिट्टुगा विलापिंचि, कसरि
विसिवि, चेष्टलु दक्कि, सोम्मसिल्लि, भक्ति
सुन्दरीप्राण धनमु, भिक्षुलकु दक्के।

[भिक्षु मंडलीसे घिरे, लड़कर,
याचना कर, रोकर, डाँटकर
ऊबकर, बेहोश हो, गिरकर (भूपर)
सुन्दरीका 'प्राण-धन' लगा भिक्षुओंके हाथ।]

चौथे और पाँचवें सर्गमें विरह-वर्णन है।

छठे सर्गमें महात्मा बुद्ध और नन्दके वार्तालापका वर्णन है। नन्द जीवनमें प्रेमकी महत्ताका वर्णन करते हुए कहता है :—

प्रिय जनविहीन मैन जीवितमु मोडु
प्रणयमाधुरी ग्रोलिन ब्रतुकु दिवस
मात्रमेनियु जालु, ब्रेमम्मुलेमि
कन्न निप्पच्चरमु वेरकलदे देव !

[प्रिय-जन-रहित जीवन है ठूँठ बराबर
प्रणय माधुरी छक, जीना बस दिनभर,
प्रेम शून्यतासे बढ़कर दरिद्रता है क्या और ?]

उसका जवाब देते हुए भगवान कहते हैं कि ममता ही दुःखका कारण है। ममताहीन प्रेम ही नित्य है। इन सब दुःखोंका कारण अहंकार ही है। यह मत समझो कि बौद्ध धर्म प्रेमहीन है। जीव-करुणा ही इस धर्मका मूलाधार है। तुम अपने प्रेमको सीमित क्यों करते हो ?

इन्नि पूवुलुंड नीवोक्क पुष्पम्मु
पुणकनेल ? येडदमुल्लु नाटि
तापमंदनेल ? तनय ममत्वदो
षम्मे शोक कारणम्मु सुम्मु ।

[है इतने फूल तो एकपर आसक्ति क्यों ?
चुभा काँटा तो दुःख क्यों ?
ममता ही है कारण दुःखका।]

अन्तमें नन्द बौद्ध-धर्म ग्रहण कर लेता है। उसकी इस इच्छाको कि सुन्दरीको भी संन्यास ग्रहणका अधिकार मिले, मान लिया जाता है।

सातवें सर्गमें नन्द और सुन्दरी समाज-सेवामें रत दिखाए गए हैं। दोनोंका मिलन विलक्षण परिस्थितियोंमें होता है। नन्द एक मरणासन्न अनाथ स्त्रीकी सेवा कर रहा है। उस स्त्रीका नन्हा बच्चा, सुन्दरीको वहीं खींच लाता है।

संस्कृत-काव्यके अष्टादश सर्गोंमें फैले हुए मूल कथाका आधार लेकर मौलिक प्रतिभा और सरसता घोलकर, केवल सात सर्गोंमें ही एक अनुपम काव्यकी सृष्टि की है इन कवियोंने। सारा काव्य सुकुमार भावनाओंसे भरा हुआ है और उसीके अनुकूल शैलीमें इस ग्रन्थमें माधुर्य गुण कूट-कूटकर भरा हुआ है। इस काव्यकी विशिष्टता यह है कि यद्यपि यह दो कवियोंकी सम्मिलित रचना है, पर कहीं भी इसका आभास तक नहीं मिलता।

'सौन्दरनन्दमु' का नाम सुनते ही द्वैत भावनाका भास होता है। नायक-नायिका दोनोंको प्रधानता देनेवाला यह काव्य है, और इसके रचयिता कवि भी दो है। जिनके करकमलोंमें यह ग्रन्थ समर्पित किया गया वे गुरु भी दो है। यह आकारमें काव्य होनेपर भी, वस्तुविधानमें नाटकके समान है। इस काव्यके विषय भी शृंगार और करुणा-समाज-सेवा—दो हैं। शान्त रसकी प्रधानता होनेपर भी इसमें शृंगार रसका पूर्ण निर्वाह हुआ है। कहना न होगा कि इस प्रकार बड़े ही स्वाभाविक ढंगसे इसमें 'द्वैत' का निर्वाह हुआ है।

प्रयोजनकी एकाग्रतामें यह काव्य अपना सानी नहीं रखता। काव्यका प्रारम्भ बुद्धके हितोपदेशसे होता है और सारा काव्य नन्द और सुन्दरीके 'बौद्धीकरण' में संलग्न है, अन्त भी बुद्धके करुणावादकी विजयमें होता है। रचनाशैली, कथा-विधान, निर्वाह-चातुर्य आदिकी दृष्टिसे यह काव्य सचमुच अत्यन्त सुन्दर है।

उपरोक्त काव्योंके अलावा समय-समयपर आकाशवाणी और अन्य पत्र-पत्रिकाओंके लिए लिखी गई फुटकर कविताएँ दर्जनोंकी संख्यामें हैं। १९६० में केन्द्रिय साहित्य अकादमीकी तरफसे तेलुगु साहित्यके प्रारम्भसे लेकर आज तकके कवियोंकी रचनाओंका बृहद्-संकलन प्रकाशित किया गया है। इस संग्रहके सम्पादक श्री वेंकटेश्वर-राव ही हैं। इस पुस्तकमें कविताओंका ऐसा सुन्दर सम्पादन है कि पाठकके सामने तेलुगु काव्यके विकास-क्रमकी सुस्पष्ट झाँकी उपस्थित हो जाती है। भूमिकाके रूपमें तेलुगु काव्य साहित्यके इतिहासकी एक झलक प्रस्तुत की गई है।

श्री काटूरि वेंकटेश्वररावकी गद्यरचनाओंमें बीसियों रेडियो रूपक हैं। इनमें 'श्रीनिवास-कल्याणमु', 'मुव्वगोपाल', 'राधा' आदि प्रसिद्ध हैं। वेंकट शास्त्रीजीके 'राजकवि' के पदपर नियुक्तिके समय 'आन्ध्र-पत्रिका' के 'विरोधी' नाम सम्वत् (१९४९) के वार्षिक अंकमें 'तिरुपति-वेंकट कवुलु' शीर्षकसे बड़ा ही विद्वत्तापूर्ण लेख प्रकाशित किया है। आपके कई साहित्यिक लेख अप्रकाशित ही पड़े हुए हैं।

श्री काटूरिजीने अँग्रेजी और संस्कृतके कुछ श्रेष्ठ ग्रन्थोंका अनुवाद भी किया है। आपने संस्कृतके प्रसिद्ध कवि भास कृत 'स्वप्नवासवदत्ता' और 'प्रतिज्ञा-यौगन्धरायणं' का भी तेलुगुमें अनुवाद किया है। अँग्रेजीसे 'बग बौरल', 'एल्लो लोटस' आदि अुपन्यास, महात्मा गाँधीजीकी 'आत्मकथा', रोम्यारोला कृत 'गाँधी', महादेव भाईकृत 'अबुल-कलाम आजाद', श्री ए. एस. पी. अय्यरके 'त्रिमूर्ति', 'चन्द्रगुप्त' आदि उपन्यासोंका भी अनुवाद किया है। पर आन्ध्र प्रदेशमें उनकी गद्य रचनाओंकी अपेक्षा काव्य-रचनाओंको ही महत्व प्राप्त है।

गाँधीजीने राष्ट्रीय-पुनर्निमाणके कार्यक्रममें 'हिन्दी-प्रचार' को भी विशिष्ट स्थान दिया था। गाँधीजीसे अत्यधिक प्रभावित श्री काटूरिजीकी रुचि हिन्दी और हिन्दी-प्रचारकी ओर प्रारम्भसे ही रही है। 'आन्ध्र राष्ट्र हिन्दी-प्रचार संघ' (दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रासकी शाखा) विजयवाड़ाके कार्यमें आपका सक्रिय सहयोग रहा है।

आज अपनी सड़सठ वर्षकी उम्रमें भी श्री काटूरि वेंकटेश्वररावजी निरन्तर साहित्य-सेवामें लगे हुए हैं। आपके दोनों पुत्र—श्री कोण्डय्या और विजयसारथी भी तेलुग साहित्यकी श्रीवृद्धिमें यथायोग्य योग दे रहे हैं। भगवान करे, काटूरि 'सहस्र-मासाधिक' आयु प्राप्त कर तेलुगु-शारदाके सौन्दर्यमें चार चाँद लगाते रहें।

● ● ●

काट्टरि वेंकटेश्वरराव

और

पिंगलि लक्ष्मीकान्तम

[काव्य-सञ्चय]

१. नेनु

लोकमु नन्नुं गविगा
वाकोनुट निजम्मु सल्पु वांछितमु तुदिं
दाकुटदि लेकये यिटु
पाकमुचेडि वयसु, बुद्धिपटिमयुदप्पेन् ।।१।।

पिंगळि कान्त सुकवितो
संगातमु, चेळ्ळपिळ्ळसद्गुरुकृप न
न्नुं गविमात्रुनि गार्वि
चें ; गोंडोक पद्यरचन चेतु जपलतन् ।।२।।

आंध्र गीर्वाणकविराजु, लांग्लसुकवु,
लल रवींद्रकवींद्रुडु सलुपु गाव्य
कुसुममालल दलदाल्चुकोनेडुपाटि
सरसत घटिल्ले, जालु नी जन्ममुनकु ।।३।।

कविकुलनंद्यमौ कवित
गल्पन चेयनि चिन्त ना मदिन्
दवुलदु सुन्त ; एदो कवि
नाममु दाल्चिनदानि कीश्वर
स्तवमयिनन्, मदन्वयकथाविध
मेनियु जेप्पनैति न
न्न वेलिति यप्पुडप्पुडु म
नंबुन दोचि दिगुल्जनिंचेडिन् ।।४।।

१. मैं

दुनिया मुझे कवि कहती रही। उस कथनको सत्य करनेकी इच्छा मेरे मनमें बनी रही। पर उस इच्छाकी पूर्ति हुए विना ही उम्र ढलती जा रही है, बुद्धिका तेज भी घटता जा रहा है ।।१।।

एकमात्र सुकवि पिंगलि लक्ष्मीकान्तमका साथ और गुरुवर चेळ्ळपिळ्ळ वेंकटशास्त्रीकी कृपाने ही मुझे कवि बनाया है, जिसके परिणामस्वरूप जो कुछ कविता करके मैं अपनी बुद्धिकी चपलता ही दरसाता हूँ ।।२।।

आन्ध्र और देवभाषाके कविवरोंके काव्य, अँग्रेजीके सुकवियोंकी रचनाएँ, उधर कवीन्द्र रवीन्द्रके अमर गान, इन काव्य-कुसुम-मालाओंको सिर-आँखों रखनेकी सहृदयता प्राप्त हुई। बस, इस जीवनके लिए यही पर्याप्त है ।।३।।

कविकुलसे सराही जानेवाली कविता की कल्पना (रचना) नहीं की। इसकी मुझे कोई चिन्ता नहीं है, किन्तु कवि कहलाता हूँ। न ईश्वरकी स्तुति ही की या अपने वंशकी कथाका कथन ही किया। कभी-कभी इस बातका ध्यान हो आता है तो थोड़ी चिन्ता होती है ।।४।।

चेसियेरुंग देवतलसेवलु,
तीर्थमुलाड, क्षेत्रसं
वासमोनर्प, विप्रुल सपर्य
लोनर्पनु, पैतृकम्मु श्र
द्धा सहितुंडनै सलुप,
दानमु धर्ममेरुंग, संजकुन्
दोसिलि योग्ग नेन्नडु अ
धोगतिके चेयिसाचुदुन् सदा ॥५॥

कुलमुनु विद्ययु रूपमु
गलिमियु ना किच्चि पंपगा, नवियेल्लन्
गलुषित मोनर्चुकोनि वें
गलिनै दरिद्रोक्कि नेडु कळवळपडुदुन् ॥६॥

न कभी किसी देवताकी सेवा की, न किसी तीर्थमें डुबकी ही लगाई। न किसी पुण्यक्षेत्रमें रहा, न ब्राह्मणोंकी सेवा ही की। मैं पितृ-कर्मोंको श्रद्धायुक्त होकर नहीं करता हूँ। दान-धर्मसे हाथ खींच लेता हूँ। किसी भी सन्ध्याके समय सूर्य भगवानको अर्घ्यकी अञ्जलितक नहीं भरता। उन्नतिकी बात तो दूर सदा अवनतिकी ही तरफ बढ़ता जाता हूँ ।।५।।

भगवानने उच्च कुल, विद्या, रूप, सम्पत्ति, सब कुछ दिया। पर उन सबको मैंने कलुपित ही किया, उसे बेकार गँवाया और अब मूर्ख बनकर हाय-हाय करता हूँ ।।६।।

———————

२. मा वाल्लु, मा ऊरु

अंतट निन्द्रकीलगिरि
यंघ्रि समीपमुनन्दु मेटि धी
मन्तुलु हूण पालकु
लर्मचिन सेतुवु हेतुवै दिशा
भ्यन्तरपूर्ण वीचिनिच
यार्भटि नाथुनि जेरु कृष्णको
क्किंत विलंबनम्मु लभि
यिचेनु वेणिक लल्लिकोंटकुन् । ।।१।।

खरकरकरतापम्मुन
जुरचुरमनि क्रागि नेरेल जूपट्टु वसुं
धरं दगदीरेनु कृष्णा
झरपरितः प्रसृतवा : प्रचयमुन बदनै ।।२।।

कंटनु वत्ति वैचिकोनि
काचेडि सैरिक पाळि पुन्नेपुं
बंटलु कृष्णकालुवलु
पर्वेनु बल्लेलु पच्चपच्चगा
दिंटकु गट्टिकोंट करि
देसुल ना दरिबेसिवारि गै
कोंटकु जाल गेस्तुलकु
गोल्चोदवेन्, सिरि निल्चे गीमुलन् ।।३।।

२. मेरे लोग, मेरा गाँव

तब इन्द्रकील पर्वतकी तराइयोंके समीप बहुत बुद्धिमान अँग्रेजी शासकोंने एक बाँधका निर्माण किया। उस सेतु (बाँध) के हेतु, अपनी तरंग समूहोंकी ध्वनिसे दिशाओंको भर देती हुई, अपने प्रियतम सागरके पास जानेवाली कृष्णाको थोड़ी देरतक वेणी सँवारनेका अवकाश मिल गया ।।१।।

सूर्यकी तीक्ष्ण किरणोंसे जलकर वसुन्धराका वक्ष फट गया था, उसमें दरारें पड़ गई थीं। सर्वत्र परिव्याप्त कृष्णाके जलसमूहसे धरती की प्यास बुझी ।।२।।

वरुणदेवकी प्रतीक्षामें पलक-पाँवड़े बिछानेवाले किसानोंका भाग्य मानों कृष्णाकी नहरोंके रूपमें चमक निकला। गाँवके गाँव हरे-भरे बन गये। खाने-पहननेकी कोई कमी नहीं रही। हरिका नाम लेकर हाथ पसारनेवाले गृहस्थोंमें दीनोंको दान करनेकी सामर्थ्य आई। घरोंमें लक्ष्मी स्थिर होकर ठहर गई ।।३।।

एरडाल बिय्यमु वोयि राजनमु
लायेनु भुक्ति, पूरिंटिका
पुरमुल् वोयेनु मंडुवाल भवनम्मुल्
मन्किकायेन्, जला
हरणक्लेशमु वासि यांड्रकु बेरळ्ळं
दब्बे गूपांबुवुल्
सरसांतःकरणावधिन् बोगडगा
शक्यंबे कृष्णानदिन् ॥४॥

नलुगड कोलकुलतो दो
पुलतो, देलिनीटिकूपमुलतो बसि पै
रुलतो, बदुनेन्मिदिकुल
मुलतो मायूरु नाडु वोलिचे सिरुलतो ॥ ५ ॥

घनपाठियै वासिगन्न भागवतुल
हनमद्बधुडु शिष्टुलंदुमेटि,
पाणिनीयमु गाशि बठियिंचि वच्चिन
प्रातूरि शंकर रामसूरि,
संगीतविद्याव्यसन मुग्गुबालतो
नलवडिनट्टि पेंड्यालवारु
अनघवर्तनुलिगवान्ववायुलु, सदा–
चारशोभितुलुप्पुलूरिवारु ॥ ६ ॥

यक्षगानम्मुलाडि पेरंदिनट्टि
सात्तनुलु, सोदेचेप्पेडि वृत्ति तोड
परिके मुग्गुलवारु मा पल्लेटूरु
कोलुवुजविके योर्नाचिरि कळलकेल्ल।

विजयदशमिनाडु बेताळ पूजलु
नायुधमुलपूज लाचरिंचु
हैहयान्ववायु लायिरीलनु पेर
गापुलै वसित्रु मा पुरमुन ॥ ७ ॥

लाल-लाल मोटे चावलकी जगह, अच्छेसे अच्छे चावल खानेको मिलने लगे। झोंपड़ियोंकी जगह डयोढ़ीदार घर बने। स्त्रियाँ दूरसे पानी भर लानेकी तकलीफसे बच गईं; क्योंकि अब घर-घरमें कुएँ खुदवा दिये गए। कृष्णा नदीके अन्तःकरणकी कृपाकी सीमाका अन्त कहाँ? उसकी प्रशंसा करनेकी सामर्थ्य ही किसमें है? ।।४।।

उस समय हमारा गाँव धन-दौलतसे भरपूर था। चारों तरफ सरोवर, बगीचे, साफ और मीठे पानीकी बावड़ियाँ तथा चारों ओर हरी-भरी फसल ऐसी लहलहा रही थी मानों श्री-सम्पत्तिने उस गाँवको वर लिया हो। हमारे गाँवमें अठारह कुलोंके लोग रहते थे ।।५।।

भागवत वंशके बुधवर हनुमय्य थे जो शिष्ट जनोंमें अग्रगण्य और घनपाठी* थे। प्रातूरि शंकर रामसूरि काशीमें रहकर पाणिनीय पढ़कर आनेवालोंमेंसे थे। पेण्ड्याल वंशके सज्जन थे जिन्हें संगीत विद्या बचपनसे ही आती थी। अनघ चरित्रवाले थे इंगुव वंश वाले। सदाचार शोभित थे उप्पुलूरि वंशके जन। यक्ष गानोंका अभिनयकर सात्तान प्रसिद्ध बने थे और भविष्यकथन× करनेवाले परिके म्रुग्गुके वंशज थे। इन सभी लोगोंने हमारे गाँवको सभी कलाओंसे विलसित कलामण्डप बनाया था ।।६।।

विजयादशमीके दिन बैतालकी एवं आयुधोंकी पूजा करनेवाले हैहय वंशके क्षत्रिय 'आयिरी'‡ के नामसे 'कम्म'§ बन हमारे नगरकी शोभा बढ़ाते हैं ।।७।।

---

*वेदमंत्रोंको, मंत्रके एक एक शब्दकी १२ बार आवृति करते हुए पढ़नेको 'घनपाठ' और छह बार आवृत्ति करते हुए पढ़नेको 'जटापाठ' कहते हैं।

×जंगली जातियोंकी स्त्रियाँ,सूपमें चावल डलवाकर,एक छोटीसी लकड़ीके साथ,घरवाली स्त्रीका हाथ पकड़ इधर-उधर घुमतीं, भविष्यका कथन करती हैं,जिसे 'सोदे' कहते हैं।

‡ आयिरी–'हैहय'का विकृत रूप।'आयिरी'किसान अपनेको 'हैहय'का वंशज बताते हैं।

§ कम्म–आन्ध्रमें शूद्रोंकी एक उपजाति। ये गाँवके मातबर किसान होते हैं।

काकतिवंश्यभूभुजुल
      कालमुनं दरिवीर कंठलुं
ठाकमुलैन खड्गमुल
      डाचिरि यट्टिकलन् ; हलायुध
स्वीकृति बाडिपंटलनु,
      बेंचिरि, पाड्वडिनट्टि पल्लियन्
जेकोनि रूपरेखलु
      रचिंचिरि वारले तोंटिकापुले ।। ८ ।।

कालुपेट्टिनट्टि नेलनेल्लनु गनि
गड्ड जेयनेर्चु कम्मवारि,
कभमुशुभमेरुगनट्टि कापुलकु मा
यूरु काणयाचियै रहिंचे ।। ९ ।।

अभिमानधनुलु नार्लान्ववायुलुनु, नि
      श्शंकसाहसुलु वेल्लंकिवारु,
कलिमियु बलिमियु जेलुवारु कडियाल
      वार, लावेंट वेमूरिवारु
सदुपायजीवनास्पदुलु नागळ्ळवा
      नेरवादुलगु सूर्पनेनिवारु,
करिसेनम्मुन सक्ति गलवेलगावारु,
      कडुनोर्मिगल येर्लगड्डवारु,
पाडिदर्प्पनि कंबमुपाटिवारु
पेरुगल सूर्यदेवरवारु निट्लु
पलुतेगल कम्मनायकुल् हलमुखान
पल्लिय नोसंट दिद्दिरि भाग्यरेख ।। १० ।।

अभिजनाभिमानु, लकुटिलवर्तनुल्
धैर्यविश्रुतुलु नुदारमतुलु
गुट्टु मट्टु गलुगु गुर्राल पेरिंटि
कापुलन्दु नायकरमु दालिच ।। ११ ।।

काकती वंशके शासन-कालमें लोगोंने शत्रुओंके कण्ठोंको चट कर डालनेवाले खड्गोंको अटारीपर छिपाकर रखा दिया था और अब उन हाथोंमें हल थामकर वे खेतीमें लग गए। ऊजड़ बने गाँवको उन्हीं लोगोंने सम्हाला और उसे सम्पन्न बनाया ।।८।।

जहाँ कदम रखा, उस जगहको सोनेकी निधि बना सकनेवाले 'कम्म' जातिके लोगों और भोले-भाले 'कापु'* जातिके लोगोंके लिए हमारा गाँव चिर निवास-स्थान बना रहा ।।९।।

नार्ल वंशज स्वाभिमानके धनी थे। वेल्लंकि वंशवाले निःशंक और साहसी थे। कडियाल वंशवाले सम्पत्ति और शक्तिसे सम्पन्न थे। उनके बाद वेमूरि वंशवालोंका नम्बर था। जीवन निर्वाहके समुचित साधनोंसे सम्पन्न थे नागळ्ळवंश वाले, तो चतुर थे सूरपनेनि वंश-वाले। खेतीमें अत्यन्त आसक्ति रखनेवाले वेलगा वंशवाले थे, तो अत्यन्त सहिष्णु थे येर्लगड्ड वंशज। वचनपर जान देनेवाले कम्बमुपाटि वंशज थे, अति प्रसिद्ध थे सूर्यदेवर वंश वाले। इस प्रकार 'कम्म' जातिके कई सुपुत्रोंने हलके सहारे हमारे गाँवकी सौभाग्य-रेखामें सिन्दूर भरा ।।१०।।

अपनी जन्मभूमिसे प्रेम रखनेवाले, निष्कपट, धैर्यवान, उदार बुद्धिवाले और सम्भ्रान्त 'गुरलि' वंशके 'कापु' जन हमारे गाँवके मुखिया बने हुए थे ।।११।।

* 'कापु' आन्ध्रमें शूद्रोंकी एक उपजाति है जो खेती कर, अपना जीवन बिताती है।

तोलिकोळ्ळ येच्चरिंतल रेक्क लल्लार्चि
मलुकोळ्ळगमुलु मारेलुगु सूप,
मुनुमुन्न मेल्कन्न मुदियव्व कदुरु झं
कृति सुतिगा नूलिकृतुलु वाड,
गरकंकणध्वनुल् कव्वंपु जप्पुळ्ळु
बेरयगा निल्लांड्रु बेरुगुदरुव,
बुलुगुल कलकलम्मुलतोड गलयंपि
सव्वडुल् तीयनै संदिडिंप,
मोटगिलकल रवळितो दोटलकुनु
जलमुतोडु बलीवर्धमुलनु गापु
लदलुपन् मोकु जव्वाट लार्लकिचु
चल्लन न्मेलुकांचु मा पल्लेटूरु ॥ १२ ॥

वेगुटु लेप्पुडेप्पुडनु
वेगिरपाटु नडंपलेक हृ
द्रागतरंग मुद्दविडि
दाटुलु वेट्टुचु गंठतीरमं
दागक, भंगमै चिद्रुपलै
चिरुमुत्तेपुगुत्तिमोत्तमै
सागक बैडिकंट्लु तोलि
जामुल पल्लिय मेलुकोल्पेडिन् ॥ १३ ॥

चेपुल्वच्चि मोगम्मुलेत्ति तनय
स्नेहार्द्रमौ चूड्कुलन्
ग्रेपुं गांचुचु नालु पिल्व, दलुगल्
ग्रेंडिचि पेल्लाकटन्
गापुल्विप्पेडि दन्क ग्रेळ्ळुरुकु लेगल्
मारुपल्कन् बळी
मा पल्लीरम मेलुकोल्पुनु
तदंभारावसन्नाहमुल् ॥ १४ ॥

सर्वप्रथम बाँग देनेवाले मुर्गेकी आवाजपर पंख फड़काकर दूसरे मुर्गोंके समूहके बाँग देते समय,तड़के जगी बुढ़ियाकी तकलीके स्वरमें स्वर मिलाकर गाते समय, कर-कंकण-ध्वनियोंके साथ सुहागिनियोंके दधिमथन करते समय, पक्षियोंके कलरवके साथ आँगनमें गोबरके छिड़कावके मधुर स्वरोंके सुनाई पड़ते समय, मोट या रहँटकी ध्वनिके साथ, बगीचोंको पानी देनेवाले किसानोंके बैलोंको धमकाते समय, मोटके रस्सेकी आवाजके निकलते समय उत्पन्न होनेवाली विशिष्ट इन सुमधुर ध्वनियोंको सुनते हुए प्रशान्त चित्त हो हमारा गाँव जाग उठता है ।।१२।।

सबेरा होनेकी प्रतीक्षामें उतावलेपनको रोक न सकनेके कारण हृदयके रागतरंगोंके उमड़कर, छलांग भरते हुए कण्ठतीरोंमें न रुककर बाहर टूटकर, छोटे मोतियोंकी मालाके समान छूट पड़नेपर पक्षी प्रातःकाल ही अपने कलरवसे गाँवको जगाते हैं ।।१३।।

पेन्हानेपर, मुँह उठाकर, सन्तान-स्नेह (वात्सल्य) से आर्द्र चितवनोंसे बछियोंको देखती हुई गायोंके बुलानेपर रस्सियोंसे छूट पड़ते हुए, भूखके मारे, किसानोंके छोड़ने तक छलाँग भरते हुए, बछड़ोंके रँभाते समय, हमारा गाँव, उन मधुर स्वरोंको सुनते ही जाग उठता है ।।१४।।

मामायल्लुळ्ळुनु, ता
तामनुमल वाविवरुस दनर नपुडु मा
ग्राममुन नाल्गु कोलमुलु
ब्रेममुन मेलंगु नरमरिक लेरुगकये ।। १५ ।।

कष्टसुखमुलंदु गलिमिलेमुलयंदु
बंचि कुडुचु नाटि पल्लेब्रदुकु
कन्नु मोरगे; नेटियन्नल केडमोगाल्
पेडमोगालु वच्चि पडिये नेट्लु? ।। १६ ।।

नाडु लेनि कोलम्मुलु नेडु रावु,
कलिमिलेमु लेनाडुनु गलवुगादे;
पल्ले ब्रतुकुल माधुर्य मेल्ल विरिगि
पंचकोलकषाय मुप्पतिलनेल? ।। १७ ।।

पंडिनपंट यूविडिचि
बैटिकि नेगदु, पेदसाद प
स्तुंडग धान्यमम्मुटलु
दोसमुगा दलपोतु, रूर ने
व्वंडु बरोपजीवनमु
पाल्पड, डेव्वनि वृत्ति वानि के
युडंग नेल्लवृत्तुलुनु
नुम्मडियूटग बेंचे सौख्यमुन् ।। १८ ।।

तमतम कार्यम्मुलु तर
तमभावमुलेक स्वकुलधर्ममुगा, ग्रा
ममु मेलुगोरि सलिपेडि
सुमतुल केटु लोदवे नैज सुखतत्परतल्? ।। १९ ।।

चारों वर्णोंके लोग बिना किसी दुराव-छिपावके प्रेमपूर्ण जीवन बिताते थे। मामा और दामाद, दादा और पोते—इस प्रकारके सम्बोधनसे सभी मिल-जुलकर रहते थे, मानों सारा गाँव एक ही कुटुम्ब हो ।।१५।।

सुख और दुःख, अमीरी और गरीबीमें एक दूसरेके सुख-दुःखको आपसमें बाँट कर अनुभव करनेवाला वह ग्राम्य-जीवन ही लुप्त हो गया। आजकल तो भाई-भाई आपसमें एक दूसरेका मुँह देखना नहीं चाहते ।।१६।।

उस समय जो कुल (वर्ण) नहीं थे, वे आज तो नहीं टपक पड़े। अमीरी-गरीबी तो सदासे ही चली आ रही है। ऐसी हालतमें ग्राम-जीवनकी उस मधुरिमाके स्थानपर रह यह पञ्चमेल कषायकी तिक्तता कहाँ से आ गई ? ।।१७।।

गाँवमें जो उपज होती थी वह गाँवसे बाहर नहीं जाती थी। गरीबोंके भूखे रहते अनाज बेचना दोष माना जाता था। गाँवमें कोई दूसरेपर आधारित हो जीवन-यापन नहीं करता था। प्रत्येकका अपना-अपना पेशा था। इस प्रकार सभी पेशे एक दूसरेके अभावोंकी पूर्ति करते हुए साझेमें समान रूपसे उपभोग करते हुए सुखोंकी वृद्धि करते थे ।।१८।।

अपने-अपने कामोंको करते समय ऊँच-नीच भावको छोड़कर और स्वकुल-धर्म मानकर, सारे ग्रामके सुखको अपना सुख माननेवाले सुमतियोंके मनमें स्वार्थकी ये भावनाएँ कैसे घर कर गईं ? ।।१९।।

अन्निवृत्तुलवारिकि नंतो यितो
भूवसति युंडु, नोकडु चेप्पुल नोसंग,
मारुगा वानि कोकडु कुम्मरमो, कम्म
रम्मो गाविंचु, गोलुचिच्चु रैतु दानु ।। २० ।।

मोललोतु बोळ्ळलोबडि
कलगलुपुग नूरि यालकदुपुलु मेयुन्
गलवारि पाडिकुंडलु
गलुगन् बेदलकु जल्ल करवेटुलुंडुन् ? ।। २१ ।।

ऊर बंडनट्टि युप्पुनकुं गूड
कोलुचोसंगि नाडु विलिचिकोनिरि ;
चुट्टनिप्पु गूड बुट्टदु डब्बीय
किपुडु पल्लेटूळळ केमिवच्चे ! ।। २२ ।।

कम्युनिजमु लेदु, कशलु दालिचिन मे
स्त्रीलु लेरु, स्वस्ववृत्तिपरत
संघमुनकु मेलु समकूर्तुरु निरक्ष
रास्युलय्यु ; नेट्टि यब्बुरम्मो ! ।। २३ ।।

नाडुनु गल्लुद्राविरि
धनम्मुलु म्रुच्चिलि, रन्यदारलन्
गूडिरिकानि पापमनु
कोंकुनु, पोक्कुनो यन्न भीति वे
म्राडेनु वारि ; निय्यदन
नट्टिभयम्मुडिवोयि; चप्पगा
नूडेनु सिग्गु; पापरतु
लूंजितुलै विहरिंतु रिच्चमै ।। २४ ।।

ओरुलकिडुटे भोगमु, नलु
रिलो दलवंपुलगुटे कोरतबडुटगा
धुरि कोल्लगगु नोललाडे दोल्लिटि पल्लेल् ।। २५ ।।
निरुपद्रवाम जीवन

सभी पेशेवालोंके पास थोड़ी-बहुत जमीन होती। एक जूते बनाता तो दूसरा उसके बदलेमें लोहेका सामान या मिट्टीका सामान देता। किसान सभीको अनाज तौल देता ।।२०।।

कमर तक बढ़े घासके मैदानोंमें (चरागाहोंमें) गाँव भरके मवेशी झुण्ड-के-झुण्ड, चरते रहते। अमीरोंके यहाँ गोरसके घड़े-के-घड़े भरे रहते तो फिर गरीबोंको छाछकी कमी कैसी ? ।।२१।।

गाँवमें पैदा न होनेवाले नमक को भी लोग अनाज देकर ही खरीदते थे। आज तो चुरुट जलानेके लिए भी आग बिना पैसेके नहीं मिलती। हाय, इन गाँवोंको क्या हो गया है ! ।।२२।।

उस समय न कम्युनिज्म ही था, न हाथमें कोड़े रखनेवाले राजा ही थे। लोग निरक्षर (अपढ़) होकर भी अपने-अपने कार्योंमें निरत होकर, समाजकी भलाई करते थे। वास्तवमें यह कैसा आश्चर्य है ! ।।२३।।

तब भी लोग सेंधी (ताड़ी) पीते, चोरी करते, व्यभिचार करते; पर उनके हृदयमें या तो पापका डर बना रहता था या पोल खुल जानेका संकोच भाव। आज तो पापका डर कभीका समाप्त हो गया है और लज्जा तथा अपमानकी बात तो कोसों दूर चली गई है। आज पापरत मनुष्य सिर ऊँचा उठाकर तथा स्वच्छन्द होकर विचर रहे हैं।।२४।।

दूसरोंको दान करना ही भोग है, चार आदमियोंके बीच अपमानित होना ही मृत्यु है, सूलीपर चढ़ना है। वे ग्राम आतंकहीन जीवनकी मधुरिमाका उपभोग करते थे।।२५।।

वृत्तुललोन दक्कुवलु
नेक्कुव लेंचरु, सच्चरित्रुलन्
नेत्तिनि बेट्टिकोंदुरु, ग
णिपरु नीतिविदूरमैन सं
पत्तिनि रित्त पांडिति नि
वर्णमु, नालयमंदु वेलुपे
सत्तेमु साक्षिगा मनिन
सज्जनुल न्नुतियिंप जेल्लदे ॥ २६ ॥

पोन्नुगर्रलु, गिरुंचेप्पुलुनु, नीरु
काविपंचेलु, दललगोकलनु दाल्चि
रेड्डिगालतो गोलुव दीरिचेंडि धर्म
तत्परुल नाटि यूरिपेद्दल दलंतु ॥ २७ ॥

इदि शाखाचंक्रमणं
बेद मेदलेडि बाध वेलिकिनिट्टुलुब्बिन. . . . ॥ २८ ॥

————————

अपने-अपने पेशोंमें ऊँच-नीचका भाव नहीं रखते थे। चरित्र-वान व्यक्तियोंको सिर-आँखों लेते। नीति-विशारद,सम्पत्ति, पाण्डित्य और वर्ण (कुल) को आदर नहीं देते थे। मन्दिरमें स्थित भगवान और सत्यको ही साक्षी मानकर जीवन-यापन करनेवाले वे सुजन क्या स्तुति करने योग्य नहीं हैं ? ।।२६।।

शामी लगी छड़ियाँ, चरमर करती हुई चप्पलें, हल्के लाल रंगकी धोतियाँ, सिरपर पगड़ियाँ बाँध, ग्रामकी देख-रेख करनेवाले धर्म-तत्पर ग्राम-नेताओंका स्मरण करता हूँ ।।२७।।

वैसे यह (ग्राम और समाजका वर्णन) विषयसे (वंश-कथन) सम्बन्धित नहीं है, फिर भी हृदयसे उमड़नेवाली वेदनाके कारण ही ऐसा किया गया है ।।२८।।

———————

३. पौलस्त्य हृदयमु

नुरुगुल् ग्रक्कुचु नूर्पुसंदडुलु
मिन्नुल् मुट्ट नोक्कुम्मडिन्
बरुगुल् द्रोक्कचु शीर्ण केशमुल
नुद्वाहुंडवै वच्चु त
त्तरमुन् गांचिन नुत्तलंपडेडि
जित्तं; बी भयोद्वेग मे
व्वरिचे नी कोनगूडे नर्णवपती!
वाक्कुच्चवय्या! वेसन् ॥१॥

भ्रुकुटिमात्रमुचे मूडु भुवनमुलकु
विलयमु घटिंचु जगदेकवीरुलमट!
नीकु मद्वाहुविंशति, नाकु नीदु
वीचिकाकोटि यट कोट! वेरपिकेल? ॥२॥

नाकु न्नीकु भयंबटन्ननुडि
येन्नंडैन विन्नाम? ने
डीकंपम्मुनकुन् गतम्मु कनरादे!
सुन्तयुन्; भास्करुं
डेकाकारत वेल्गु, वायुवुनु
मुन्नेट्टट्टुले वीचु, ले
दे कल्पान्तपयोदगर्ज कनरादे
तारकल् रालुटल् ॥३॥

चन्द्रहासमु न चेयि जारलेदु
और्वशिखियु नी जठरमंदारलेदु
सज्यकार्मुकुडै रामचन्द्रमूर्ति
शिंजिनीटांकृतियु निंक सेयलेदु ॥४॥

३. पौलस्त्यका हृदय

[श्रीरामचन्द्रको लंकापर चढ़ाई करनेके लिए आते देखकर सागरके कहनेपर रावणके उद्‌गार]

हे अर्णवपति! फेन उगलते हुए, साँसोंके फूलनेकी आवाजसे आकाशको भर देते हुए, उछलते-दौड़ते बिखरे बालों और ऊपर उठे हाथ लेकर आनेवाले तुम्हारी घबराहट देखकर मेरा हृदय शंकित हो रहा है। यह भय और उद्वेग किसके कारण हैं? जल्दी बोलो तो ।।१।।

केवल भौंहोंको टेढ़ा कर देने मात्रसे ही तीनों लोकों में प्रलय मचा देनेवाले जगदेकवीर हैं हम! तुम्हारी रक्षाके लिए मेरे बीस हाथ हैं, तुम्हारा वीचि-समूह ही मेरे लिए दुर्ग है। फिर डर किस बातका? ।।२।।

क्या कभी सुना है मेरे लिए और तुम्हारे लिए डर नामकी कोई वस्तु है? आज तुम्हारी इस कँपकँपीका कोई कारण तो दिखाई नहीं देता। भास्कर वैसे ही (यथावत्) प्रकाशमान है, वायु भी पहले जैसी ही चल रही है, प्रलयकालीन मेघोंकी गरज भी सुनाई नहीं पड़ रही है। तारिकाओंका टूट पड़ना भी नहीं दिखाई दे रहा है ।।३।।

चन्द्रहास (रावणकी तलवार) भी मेरे हाथसे छूटी नहीं है। तुम्हारे जठरकी अग्नि भी (बाड़वाग्नि) बुझी नहीं है। धनुष हाथमें लिए रामचन्द्र अभी टंकार नहीं कर रहे हैं ।।४।।

एट्लु ? चेप्पवु ? राघवुडे ! मरेल !
विड्डुवु कंपमु, त्रोव राविड्डुवुमतनि
कनुजसौमित्रितो, सूर्यतनयुतोड
हनुमतो, दरुचरवरूधिनुल तोड ।।५।।

एन्नाळ्ळकु ! एन्नाळ्ळकु !
कन्नुलु विंशतियु नाकु गल्गिनफलमा
सन्नमयि वच्चे ! भुजग
वोन्नति चरितार्थमगु मुहूर्तमु वच्चेन् ।।६।।

नाटिकि नेडा ? तलपुन
नाटेनु सामिकि विकुंठनगरोदितमौ
माटलु ; दीर्घविलंबनमु
वाटिंचि विभुंडु नन्नु वंचिंचेगदे ! ।।७।।

पातालाधिपु तोक द्रोविकति,
शची प्राणेशुकैश्यम्मु डा
चेतं बट्टिति, वेंडिकोंड शिवुतो
शीताचलेंद्रात्मजो
पेतं बल्ललनाड जेसितिगदा !
यी विश्वविक्षोभ मे
ला तिंप्पडु सामि नन्नेरिगि ?
मेला नन्नु वंचिंचुटल् ।।८।।

शिवकोदंडमु द्रुंचे, सीत वरियिंचेन्
रामु डन्नप्पुडे मा
धवु कार्यबनुकोंटि, भार्गव भुजा
दर्पापहारक्रिया
श्रवणंबुन् सरिदाकगा, दिनमु
वर्षंबैन युत्कंठचे
नविवेकम्मुन गन्नुगान कटु
द्रोहारंभमुन् जेसितिन् ।।९।।

हैं! क्या कहा? राघव हैं! फिर कहते क्यों नहीं? अब क्या? इस कँपकँपीसे बाज आओ, उसके लिए मार्ग दे दो। भाई लक्ष्मण, सुग्रीव, हनुमान और बन्दरोंकी सेनाके साथ आनेवाले उस रामचन्द्रके लिए रास्ता दे दो ॥५॥

कितने दिनोंके बाद! हाँ, कितने दिनोंके बाद बीसों आँखोंके रखनेका फल प्राप्त करनेका समय निकट आया है। भुजाओंकी गर्वोन्नति के चरितार्थ होनेका भी मुहूर्त आया है ॥६॥

तबकी बात आज याद आई स्वामीको! वैकुण्ठनगरकी वे बातें—सनकसनन्दनादि मुनियोंके शाप देनेपर अभय-प्रदानकी बातें—आज ध्यानमें आईं। इतनी देरी करके भगवानने मुझे सान्निध्यके सुखसे वञ्चित किया न! ॥७॥

पातालके राजाकी दुम बदाई, शची देवीके प्राणेश (इन्द्र) के केश बाएँ हाथमें से पकड़े। शिवजी और पार्वतीके साथ रजताचल (कैलास) को हाथोंमें पर ले कर हिला या। जानबूझकर भी स्वामीने इस विश्व-विक्षोभकी इतिश्री क्यों नहीं की? सब कुछ जानते हुए भी मुझे छलनेमें भला क्या रखा है? ॥८॥

'शिवके धनुषको तोड़कर रामने सीताका वरण किया' यह सुनते ही समझा कि यह माधवका ही काम है। परशुरामके भुज-दर्पके दूरकरनेकी बात सुन, एक-एक दिनको एक वर्ष मानकर बड़ी उत्कण्ठासे प्रभुकी प्रतीक्षा करता रहा। अविवेकके कारण उस स्थतिमें आँखोंके मुँद जानेपर विद्रोही काम करने शुरू कर दिए ॥९॥

'देवि! जानकी! येचटने देवि!' यनुचु
दंडकाटवि नेलगेत्ति तरुलगिरुल
नेमकि, मृगमुल खगमुल निलिपि यडिगि
युरक वापोयेनट! नन्नु मरचि विभुडु ।।१०।।

तम्मुगुरं मूपुन गेलुदम्मि मोपि
उबुकुवक्षम्मु बाष्पम्मु लोलुकु गनुलु
नगुचु नातंड्रि यांति मै नडलुनाटि
जालिरूपु ना मोमुन व्रेलु नेडु ।।११।।

पुडमिकानुपु ने नट्लु पुडिकि तेच्चु
टलु जटायुवुचे विनि, विलुलिताश्रु
कलुषितकपोलमुल गेंपुदोलुक ग्रोध
मुद्रिताननुडै रामभद्रमूर्ति
'रावणा!' यनि नन्नु, बेर्वाडि प्रतिन
सलिपिनपुडुगदा मनश्शान्ति दोरके।।१२।।

पदुगुरलोन नन् गुरुतु पट्टुनो
लेदो यटंचु सर्वभू
विदितपराक्रमुंड नयि
वीरिडिसेतलु पेक्कु चेसितिन्
बदुगुरु 'वीडु रक्कसु' ड
नन् वेडनिंदलकग्गमैति, दा
मदिमदिनुंडि नन् मरचे
माधवुडेंतटि क्रूरचित्तुडो! ।।१३।।

मुनुल हिंसिचुटलु नाकु मनसो? सतुल
जेरनिडुट केनु बशुवुनो? चेप्पु मीवे!
इट्टुलु दानु नृशंसु जेयुटलु गूड
ब्रभुनकु विनोदमैन गावच्चु; दास
जनगवेषणायासमु दनकु गूर्चु
क्रूरकर्ममु मात्रमेनेर निजमु।।१४।।

मुझ दुष्टको भूलकर, सुनते हैं, 'देवी जानकी ! कहाँ है मेरी देवी ! !' कहते,ऊँचे स्वरमें पुकारते,दण्डकारण्यके तरुओं,पर्वतोंकी खाक छानकर,खग-मृगसे पूछ-पूछकर, स्वामी बेकार ही बिलखते रहे। उनकी समझमें यह बात कैसे नहीं आई कि मेरे सिवा ऐसा काम कोई दूसरा नहीं कर सकता ।।१०।।

छोटे भाईके कन्धेपर कर-कमल धर, फूलती छाती और आँसुओंसे डबडबाई आँखोवाले विरह-व्यथा भारसे पीड़ित मेरे स्वामीकी वह मूर्ति आज मेरी आँखोंके सामने स्पष्ट दीख रही है ।।११।।

भूमिपुत्रीको उस प्रकार मेरे द्वारा चुराकर लाए जानेकी बात जटायुके मुँह से सुनकर, ढलते आँसुओंसे कलुषित बने कपोलोंवाले, के कारण रक्तिम हुए मुखसे, रामभद्रमूर्तिरामने 'रावणा !' कहकर मेरा नाम लेकर जिस दिन प्रण किया, उसी दिन तो मुझे मानसिक शान्ति मिली थी न ! ।।१२।।

इतने जनोंमें प्रभु मुझे पहचान सकेंगे कि नहीं, इस आशंकासे सर्वभूविदित पराक्रमशील होकर, कितने दुष्ट कार्य किए। कई लोगोंने उँगली उठाई कि 'यह राक्षस है।' इस प्रकार निन्दाओंका पात्र बना रहा। ऐसा होनेपर भी मुझे भुला दिया उस माधवने। कितना कठोर चित्तवाला है वह ! ।।१३।।

मुनियोंको सताना मेरे पसन्दकी बात थी ? सती नारियोंको कैद करनेके कारण क्या मैं पशु हूँ ? तुम्ही कहो। इस प्रकार मुझे राक्षस बनाना (मेरे हाथों दुष्कर्म कराना) प्रभु के लिए मनोविनोदका साधन तो हो सकता है, पर मैंने ऐसा कुछ नहीं किया जिस से उन्हें दास जनकी खोज करनेका कष्ट उठाना पड़े ।।१४।।

इंतचेसिनगानि नार्किचुकंत
मंचिदक्कगनीडाये माधवुंडु ;
सागरा ! एमि वर्चियितु ? जानकम्म
तल्लिने हरियिंपक तप्पदाये ।।१५।।

स्वामिद्रोहमुकूड नेर्पे दुदकुन्
वैकुंठुडौरौर ! ता
नेमो नाकिडु बास लोदलपडायेन्,
ग्रुड्डिलोकम्मु त
न्ने मेच्चेन, दोसगेल्ल जाल्पुदललन्
निल्पेन्, महांबोनिधि
स्वामी ! मर्त्युल राजनीति निपुणत्वं
बेल्ल विन्नावुगा ।।१६।।

उट्टिगट्टि यिचट नूरेगनुंटिना
येमि ? लोकभीति येल नाकु ?
दक्कनिम्मु मंचितनमेल्ल विभुनके ;
अतडु नन्नेरुंगुटदिय चालु ।।१७।।

एल्ल एरिगियुंडि एमि एरुंगनि
यट्लु हरि चरिंचु नप्पुडपुडु ;
एरिगियेरुगलेक ये नक्कटा ! भूमि
पुत्रि नपहरिंचि मोसपोति ।।१८।।

इंट नुन्न यप्पुडी मायनटनमुल्
लेवु केशवुनकु ; गेवलुडयि
दर्शनम्मोसंगु तंड्रि ने नेरुगने !
मायदारि यय्ये महिकि डिग्गि ।।१९।।

इतने कुकर्म कर डाले पर माधवने मेरे पल्ले थोड़ी भी अच्छाई नहीं रहने दी? हे सागर! क्या कहूँ? जानकीमाताको हरने तक दम नहीं लेने दिया ।।१५।।

अरे, अन्तमें उस वैंकुण्ठवासीने स्वामी-द्रोह करना भी सिखाया। मुझे जो वचन दिया वह तो मनमें लाते नहीं। और यह अन्धा जग उसीकी तारीफ करता है। सारे दोष तो मेरे सिरपर ही मढ़ देता है। हे अम्बुनिधि स्वामी! इन मर्त्योंके राजनीति-कोशको सुना है न?।।१६।।

क्या मैं यहीं पर घर बनाकर रहनेवाला हूँ? संसार लाख कहे, मुझे डर काहेका? रहने दो सारी भलाई प्रभुके साथ ही। वे मुझे जान लें, मेरे लिए इतना ही काफी है ।।१७।।

सब कुछ जानते हुए भी हरि कभी-कभी ऐसा करते है मानों कुछ जानते हीं नहीं। जानते हुए भी अनजान बनकर भूमिपुत्रीका हरण कर मैं धोखा खा गया! ।।१८।।

घरपर तो ये कपट नाटक नहीं करता था केशव। मोक्षदाता होकर दर्शन देनेवाले मेरे स्वामीको मैं नहीं जानता। वह इस महीपर आनेपर ही मायावी बन गया ।।१९।।

तनदरि केनु रादगिन दारुल
    नन्निटि मूसियुंचिनन्
मनमुन नोर्चि, नन् दरियु
    मार्गमुलन्निटि विप्पियुंचि, रा
वणभयदांघ्रिमुद्र कनुपट्टनि
    सूदिमोनंत नेलयुन्
दनकु मिगुल्पनैतिनि कदा !
    विभुडेटिकि जागुचेसेनो ? ।।२०।।

कलसकलाध्वमुल् मदभिगामुलु
    गावुटेरिंगि भ्रान्तिमै
निलुचुनो पालुवोवकनि
    निक्कुपुमार्गमोकंडे चेसितिन्;
तोलगनि राचबाटगद
    तोय्यलि ने गोनिचन्नदारि, न
न्नलमट बेट्टिनन् विडुतुना ?
    तन मायलु चेल्लनित्तुना ? ।।२१।।

रावणुडन्न गाळ्ळ बडु
    रायियु रप्पयुगादु, जालिमै
गावग नाति कोतियुनु
    गाकियु ग्रद्दयुगादु, लोकवि
द्रावणुडुग्रवीरचरित
    प्रथितुंडतिमानियौ दश
ग्रीवुडु पोरिलो बोडिचि
    गेल्चुनु जच्चुनुगाक, वेडुने ? ।।२२।।

अपने पास आ सकनेवाले सभी मार्ग उसने मेरे लिए बन्द कर रखे फिर मैं भी सहनशील बना रहा। मेरे पास आनेके सभी मार्ग मैंने खोल रखे और रावणके भयोत्पादक अन्धिमुद्राओंसे रहित भूमि सूईके नोकके बराबर भी, रख नहीं छोड़ी। इतना होनेपर भी प्रभुने देरी क्यों की? ॥२०॥

यहाँपर जितने भी मार्ग हैं, वे सब तो मेरे पास ही आनेवाले हैं। इतने मार्गोंको देखकर तथा चकराकर कहीं रुक न जायें, इस कारणसे एक सीधा मार्ग, राजमार्ग बना दिया। सीता माईको जिस मार्गसे लाया वह तो न मिटनेवाला राजमार्ग है न? मुझे सतानेपर मैं भी क्यों छोड़ूँ? उसकी मायाको यहाँ कब चलने दूँगा? ॥२१॥

रावणको क्या समझा? वह ऐसे ही पैरों पड़नेवाला कंकड़-पत्थर नहीं है। दया दिखाकर रक्षा करनेके लिए न स्त्री ही है, न बन्दर ही। न कौआ है न गीध ही। यह रावण तो लोकविद्रावण है, उग्रवीरचरितवाला है, अत्यन्त प्रसिद्ध महा स्वाभिमानी है। ऐसा दशग्रीव रणक्षेत्रमें युद्धकरके जीतेगा या मरेगा, पर शत्रुके आगे कभी नहीं झुकेगा ॥२२॥

चूडुमु नेच्चली ! विभुनि
        जूचितिवेकद ! चेप्पुमेट्ट लु
न्नाडोरघूद्वहुंडु, ललना
        विरहव्यथ, ग्रागि चिक्कियु
न्नाडो ? दशास्यकंठदळन
        प्रवणाग्रहवृत्ति वेल्गुचु
न्नाडो ? अधिज्यधन्वुडरुण
        द्युतिरंजित नेत्रकोणुडै ।।२३।।

विंटिनि मारीचुनिचे
विंटिनि शूर्पणखचत, विंटि हनुमचे
विंटिनि जनकात्मजचे
विंटिनि रघुवीरु बाहुवीर्यकथनमुल् ।।२४।।

वसवल्चु चक्किळ्ळ वयसुन लज्जमै
        मुनियाज्ञ दाटक दुनुमु सोगसु
जुनपालु ब्रेलु नीडुन शैवचापम्मु
        विरिचिन श्रृंगार वीर महिम
पसपुबट्टलनिग्गु पस भार्गवक्रोध
        संध्यमार्यिचिन शौर्यसार
मालि बासिन क्रोत्त यलतमै वज्रसा
        रुनि वालि नोक कोल दुनुमु पटिम
विंटयेकानि इन्निटिकंटे, राच
पट्टमु दोरंगि, नारलु गट्टि कान
मेट्टिनट्टि वेक्कसमैन दिट्टतनमु
विंटि; सामिके तगुननुकोंटेकानि ।।२५।।

देखो मित्र, तुमने स्वामीको देखा है न ! कहो तो वह रघुकुल तिलक कैसा है! प्रियाकी विरह-व्यथासे व्यथित होकर दुर्बल बना हुआ है। रावणके दसों सिरोंको काट डालनेकी उसकी लालसा प्रबल है न ? तने धनुषवाला और अरुण द्योतिवाला रञ्जित चितवनवाला वह कैसा है ?।।२३।।

उस रघुवीरके बाहुबलकी कथा मारीच, शूर्पणखा, हनुमान और जानकीके मुँहसे सुन चुका हूँ।।२४।।

कोमल कपोलवाले वयमें, शरमाते हुए, मुनिकी आज्ञासे ताड़काको मार डालनेका वह सौंदर्य, लहराते जुल्फोंके वयमें शिवधनुषको तोड़ डालनेकी ऋंगार-वीररसमहिमा, पीले वस्त्रोंमें पीलेपनसे भार्गव-क्रोध रूपी सन्ध्याको मिटानेवाला वह शौर्य-सार, पत्नीके विछोहके नए क्रोधमें, वज्रकाय बालिको एक ही बाणसे धराशायी करनेकी वह शक्ति (सामर्थ्य) इन सबके बारेमें मैंने सुना है। पर इनसे भी बढ़कर राज्यपदको छोड़कर, वल्कल पहन, जंगलोंमें रहनेकी कठिन दृढ़ताको सुना और समझा कि यह सब स्वामीके ही योग्य है।।२५।।

श्यामलकान्तिमोहनमु
 सौम्यगभीरमु सुप्रसन्नरे
खामृदुहासभासुरमु
 गन्नुलपंडुवुनैन रामु ने
म्मोमुनु मीरुवोले गन
 नोमनुगादे ; कठोरवृत्तिनै
सामिनि मुन्ने घोररणसत्र
 निर्मंत्रितु जेसि यंचुटन् ।।२६।।

विनुमु, दशकंधरुनि विश्व विजयकीर्ति
दर्पणंबयि तळतळतळ वेलुंगु
चन्द्रहासमे श्रीरामचन्द्रुनकुनु
नाकु घटियिंचुत मिथोवलोकनम्मु ।।२७।।

तोयधी ! धन्युडवुनीवु, तोल्लि मत्स्य
कमठरूपत नीदे नीगर्भमु हरि,
नेडु वेंडि दरिपनुन्नाडु निन्नु,
नेल्लि निनु जेरि पर्वाळिचु नेमि येरुग
नट्टलु तरंगलालितुंडगुचु शौरि ।।२८।।

अगुदुरु मिम्मुबोट्लु चरितार्थुलु
 कादनगानि, मोमु मु
रुगोनिन तंड्रिकंटे, दयतो
 जनु ग्रोल्चिन तल्लिकंटे, मै
सगमगु सीतकंटे, बरिचर्य
 लोनर्चिन तम्मुकंटे नी
जगदभिघाति रक्कसुडे
 सामिकि मिक्किलि गूर्चु नेच्चली ! ।।२९।।

तल्लिदंड्रि यालु दुम्मुंडु मोदलु मी
केल्ल लंके वैचे वल्लभुंडु ;
वल्लभुनकु नेने वैचिति बेनुलंके
नोरुलेरुंगरिद्दि परुडे येरुगु ।।३०।।

श्यामल कान्तिसे मोहन, सौम्य-गम्भीर, सुप्रसन्नरेखा मृदु-हास-युक्त, चितवनको धन्य बनानेवाले उस रामचन्द्रके सुन्दर मुखड़ेको तुम लोगोंके समान मैं देख नहीं पाया। कारण, मैंने कठोर बनकर पहले ही उसे रणयज्ञमें निमन्त्रित कर रखा है न? ।।२६।।

सुनो, दशकन्धरकी विश्वविजय-कीर्तिका दर्पण बन चमकनेवाला चन्द्रहास ही हम दोनोंका परस्परावलोकन संघटित करेगा।।२७।।

हे सागर! तुम धन्य हो। पहले भगवान मछली और कछुआ बनकर तुम्हारे गर्भमें तैरते रहे। आज वही हरि फिरसे तुम्हें तारनेवाले हैं। परसों फिरसे तुम्हारी तरंगोंसे लालित होते हुए ऐसे लेटे रहेंगे मानों कुछ जानते ही न हों।।२८।।

यह मानता हूँ कि तुम जैसे लोग कृतार्थ तो होते ही हैं। पर मुखको चूमनेवाले पितासे, प्रेमसे दूध पिलानेवाली मातासे, अर्द्धांगिनी सीतासे, निरन्तर सेवाएँ करनेवाले भाईकी अपेक्षा भी हे मित्र! जगत्का कण्टक यह राक्षस ही स्वामीको प्रियतम लगेगा मित्र! ।।२९।।

माता-पिता, पत्नी-भाई आदि तुम सबको उसने बाँध रखा पर मैंने ही उस वल्लभको एक बड़े गलजन्दड़ेसे बाँध रखा है। यह राज़ कोई दूसरा नहीं जानता। उसीको मालूम है।।३०।।

प्रियदर्शनुडै श्रितुल क
भयमुद्र धरिंचु सर्व भद्रुनि भयवि
स्मयकारि विलयसमया
द्वयभावं बन्यदुर्लभमु ने गंदुन् ।।३१।।

एंचि चूड जानकि हरियिंचुटेंत
मंचिपनि यय्ये! स्वात्मकिम्माड्कि दोल्लि
एव्वरपचार मोनरिंचि? रेव्वरिकिनि
दोरकनि यगाधतलमुलु दोरकु नाकु ।।३२।।

पोरुलेरुंगडो, दनुज
पुंगवुलन् मधुकैटभादुलन्
जीरि वधिंपडो, किटिनृसिंह
मुखाकृतुलन् धरिंपडो,
गौरवमिट्लोनर्चे दशकंठुन
की पुरुषोत्तमाकृतिन्
शौरि कपूर्वविक्रम
रसम्मुन बारणसेयगावलेन् ।।३३।।

पतिभिक्षन् शचिकिच्चि, गुह्यकपतिन्
बंधिंचि, कैलसा प
र्वतमुन् बातगलिंचि, कंठदळ
नारंभम्मुचे नीशु द
र्पितु गाविंचिनयट्लुगादु; मुरवैरिन्
श्रीशु नात्मेशु न
र्चितु गाविंचेडि मेटिपंडुविदे
वच्चेन् जन्द्रहासासिरो! ।।३४।।

स्वीकृतवीरव्रतपरि
पाकमु, वैरानुबन्ध फलसिद्धि यिदे
नैकरणप्रणयिनि! येट्टु
काकुत्स्थुन काजिभिक्ष कल्पिचेदवो! ।।३५।।

प्रियदर्शन हो, आश्रितोंको अभयमुद्राके साथ दर्शन देनेवाले उस सर्वभद्रके भय और विस्मयको उत्पन्न करनेवाले प्रलयकालके अद्वैत-मूर्तिके दर्शन, जो अन्योंके लिए दुर्लभ हैं, मैं प्राप्त करूँगा ।।३१।।

जरा पीछे मुड़ कर तो देखूँ कि जानकीको हर लाना कितना अच्छा हुआ है! अपनी ही आत्माका किसने इस प्रकार अपकार किया है? मुझे ऐसे अगाधतल मिलेंगे जो अबतक किसीको नहीं मिले हैं ।।३२।।

क्या वह (हरि) युद्ध करनेके मजेको नहीं जानता? मधु कैटभ आदि राक्षसोंका वध नहीं किया था उसने? वराह और नृसिंह आदिका रूप उसने नहीं धरा हैं? इस प्रकार पुरुषोत्तमका आकार धारण करके उसने दशकाण्ठके गौरवको ही बढ़ाया है। शूरका, अपूर्व विक्रम-रससे पारण करना चाहिए ।।३३।।

शचीको पति-भिक्षा देकर, कुबेरको कैदकर, कैलास पर्वतको समूल हिलाकर, सिर काट-काटकर शिवको धमकाना नहीं है। मुरवैरि, श्रीश और आत्मेशकी अर्चना करनेका लो यह महोत्सव आया है, हे चन्द्रहास! ।।३४।।

वीरव्रतके स्वीकारकी पराकाष्ठा, वैरानुबन्धकी फलसिद्धि यही है। हे अनेक-रण प्रणयिनी! देखें, उस काकुत्स्थके युद्धकी भिक्षाका प्रबन्ध किस प्रकारसे करोगी ।।३५।।

लेदु पतंगवाहनमु, लेवु करंबुल बांजचन्यकौ
मोदकुलुन्, सुदर्शनमु, पूनडु, रावणु गेल्ववच्चे दा
मोदरुडैंत नेरुपरियो ! पदिजंटलचेतुलार ! आ
कैदुवुलाजिवेळ हरि, कैकोनुमाड्कि बरार्कमिंपुडी ।।३६।।

ओंटि विलुकाडवै नन्नु नोर्चु तेगुव
वलदुरा ! राघवा, राघवा ! दशास्यु
नक्कटा ! क्रूरविक्रमु, स्वात्महनन
पातकुनि जेयकुमुर ! नी पादमान ! ।।३७।।

चिरविरहाग्नि ग्रागु, नड चिच्चुलगुंडमु वोले बग्गुब
ग्गुरनेडि चेतुलिर्वदिट, गूरिचिपट्टि, दशास्यमंडलिन्
दरिकोनि रावणाग्नि बहुधा, दहिर्यिंप, सवान्तमन्दु दा
शरथियो पंक्तिकंधरुडो, शाश्वतभावमु गांचु गावुतन् ।।३८।।

पोम्मुनेच्चेलि ! राममूर्तिकि नेदुरेगि, पुट्टु मुत्तियमुल स्रुग्गु वेट्टि
अत्युन्नतम्मुनु नतिगभीरम्मैन, गर्भवीचिमतल्लि गद्देवेट्टि
रमकंटे गौस्तुभरत्नम्मुकंटे गा, रामैन मणुलु दर्शनमोसंगि
लंककु बंपु,पौलस्त्युंडु सिरिकोल्वु, चविकयौ वक्षम्मु चंद्रहास

दारितमोर्नाच, आ गंटुदारिवेंट
हृदमुन् जोच्चि, येकान्त मिच्चींगचि
स्वयागतमु बल्कुननि विन्नपम्मु सल्पु
मचटनें पुनर्दशनमगुत मनकु ।।३९।।

———————

न पक्षिवाहन है, न हाथोंमें पाञ्चजन्य कौमोदक ही हैं और न चक्र ही है। बिना किसी हथियारके आनेमें वह दामोदर कितना चतुर होगा? हे मेरे बीस हाथो! अपने पराक्रमका ऐसा प्रदर्शन करो कि हरिको उन हथियारोंको ग्रहण करना ही पड़े ।।३६।।

हे राघव! हाथमें सिर्फ धनुष-बाण लिए अकेले मेरे सामने आनेका साहस मत करो। तुम्हारे चरणोंकी शपथ, क्रूर विक्रमशाली इस दशाननको स्वात्महननके पापका भागी मत बनाओ ।।३७।।

चिर विरहकी अग्निसे भड़कती एवं धू-धू जलती हुई अग्निके कुण्डको, बीस हाथोंसे पकड़कर, उस रावणाग्निके दसों चेहरोंको जला देते समय, इस युद्ध रूपी यज्ञके बाद या तो दाशरथी या दशकन्धर ही शाश्वत भाव प्राप्त करेंगे ।।३८।।

जाओ मित्र! रामचन्द्रकी अगवानीमें मोतियोंकी रांगोली सजाकर, अति उन्नत और अति गम्भीर वीचिकाका सिंहासन तैयार कर, रमा और कौस्तुभ मणियोंसे भी बढ़े-चढ़े मणियोंका उपहार देकर लंकामें भेजो।

लक्ष्मीके स्थान बने श्रीवक्षको चन्द्रहाससे विदारित कर, उस खरोंच द्वारा हृदयमें प्रवेश कर, वहाँ एकान्त प्राप्त कर पौलस्त्य श्रीरामका वहीं स्वागत करेगा, उनसे जाकर यही विनती करो। जाओ, वहीं फिर दर्शन होंगे ।।३९।।

———————

४. गुडिगण्टलु

एलिकवै जगम्मुलकु नेडुमलल्
पयिकोम्मु मीद श्री
नीळलु जोलवाड शर्यानिंचिन
देवर ! मेलुको, कृपा
वाल ! श्रितानुकूल ! श्रुतिपारचर
त्पदपद्म ! मेलुको
नीलसरोजपत्ररमणीय
विलोकन ! मेलुकोगदे ! ॥१॥

नैगम मूलमंत्रमुलु
नांदिमुखम्मुलु विश्वसृष्टिकिन्
योगिसमाजमानसगुहोदित
मंगळदीपिकारुचुल्
सागरकन्यका हृदय सारस
षट्पद गीतिकारुतुल्
नी गुडिगंट सव्वडुलु निंगि
चेलंगे प्रबुद्धलोकमुल् ॥२॥

वेदशिखाध्वनीन मरविंदसख
म्ममरेंद्र पूजितं
बादिमसर्गमूल मखिलाश्रित
रक्षण दक्षमैन श्री
पादयुगम्मु दौलगनि,
पाणितलम्मुलु मोड्चि धन्युलै
पोदरु वीरु ; वाकिळुलु मूयकु
नी गुडिको दयालया ! ॥३॥

४. मन्दिरकी घण्टियाँ

जगोंके शासक बन सात पर्वतोंके ऊपरके शिखरपर श्री और नीळा-देवी द्वारा गायी गई लोरीसे शयनका आनन्द लेनेवाले हे प्रभु ! जागो। जागो हे कृपापालक ! आश्रित-अनुकूला ! श्रुतिपारचरत्-पद पद्मा ! * हे नीलसरोज-पत्ररमणीय विलोकना ! जागो न ! ।।१।।

तुम्हारे मन्दिरकी घण्टियोंकी ध्वनियाँ जो विश्वसृष्टिकी नान्दी रूप निगमोंके मूल मन्त्रोंके समान, योगी समाजके मानसरूपी गुफाओंमें उदित मंगल दीपोंकी कान्तियोंके समान, सागर-कन्या (लक्ष्मी) के हृदयरूपी सारस (कमल)के भ्रमरके मधुर गुञ्जारके समान हैं, आकाशमें फैल रही हैं जिससे सारे लोक प्रबुद्ध (जागृत) बन रहे हैं ।।२।।

उपनिषदोंके मार्गपर जानेवाले, अरविन्द सम, अमरेन्द्रपूजित, आदि सृष्टिके मूल, अखिल आश्रित जनकी रक्षामें दक्ष तुम्हारे श्रीचरणोंको दूरसे ही देख, हाथ जोड़, धन्य बन जाते हैं ये लोग। हे दयामय ! मन्दिरके द्वार बन्द मत रखो ! ।।३।।

---

* उपनिषदोंमें प्रतिपादित होनेवाला !

चीकटि कोंपलो ब्रदुकु,
चिकितलल्, मेयि गाटिपात, पे
ल्लाकटिंकित संकटियु
नंबलियुन् , जविकित युप्पुगल
वेकटिंकित चप्पिडियु,
वेंकिकि बस्तुलुनैन वीरिपै
नी करुणाकटाक्षरस
निस्सरणम्मुलु पोंगिपारुतन् ।।४।।

तिन्नाडो परतुले युन्नाडो, मुप्रोद्दु
गुडुवबेट्टुनु नीकु गड्पुनिंड,
कट्टेनो मै गोचि पेट्टेनो, दुव्वलुवलु
देच्चि नीकिच्चु दलकु मोलकु,
नीराडेनो धूळि पाराडेनो, सुगंधि
नीरम्मुलार्चु निन् रेपुमापु
एंडेनो तडिसेनो, एंडवानलु
सोककुड नीकिडु गुळ्ळुगोपुरमुलु
नेडुकादुगदा यितंडूडिगम्मु
सलुपु, टोकनाडु गोरिक देलिय नडुग ;
वडुग वच्चिन गुडिदूरि गडिय वैचि
कूर्चिटिवि कोंडेविक गोप्पदोरवु ।।५।।

———

अँधेरी कोठरीगें जीवन, उलझे-रूखे बालोंवाले सिर, शरीरपर चिथड़े, भूखका इतना-सा सतुआ और माँडनी, रुचिके लिए थोड़ा-सा नमक। पेटके लिए स्वादहीन भोजन और ज्वरपीड़ितको लंघन, (उपवास)——इस प्रकार जीवन-यापन करनेवाले दीनोंपर, अपने करुणा-कटाक्षरसके प्रवाह उमड़ पड़ने दो ।।४।।

स्वयं खाये या भूखा ही रहे, पर तुम्हें तो पेटभर, तीन बार खिलाता है, स्वयं अच्छा पहने या कौपीन ही धारण करे, पर तुम्हारे सिर और शरीरके लिए दुपट्टे ला देता है, पानीसे नहाया, कि धूलमें ही लोटता रहा, पर तुम्हें तो शाम-सबेरे सुगन्धित जलसे स्नान करवाता है, धूपमें तपता रहा या वर्षामें भीगता रहा, पर तुम्हारे लिए तो मन्दिर और गोपुर बना देता है,धूप-बारिशके बचावके लिए, आजसे नहीं न इसका (भक्तका) इस प्रकार सेवा करना। पर किसी दिन उसकी इच्छा तक नहीं पूछी। कभी वह पूछने आया तो तुरन्त मन्दिरमें छिपकर सांकल लगाकर बैठ जाते हो पर्वतपर। कितने बड़े स्वामी हो जी! ।।५।।

———————

५. संक्रांति

कुक्कुटम ! नीवु सकृतिवि, कोरि युरिनि
बेट्टुकोन्ननु जावु लभिंपदुत्त
रायणम्मुन, नीवु संक्रांति वेळ
गत्तिदेब्बकु शिरमोग्गि, कदननिहतु
लैनवीरुलके भोग्यमै, तदन्य
दुर्लभंबगु दिवि जेरुदुवुगदन्न !
जमिलिपंबनु विनु गणाचारिकि बले
दोलकरिन् मेघगर्जनमुलनु विनुम
यूरमुनकट्लु देहमुप्पोंगु नीकु
दोडि कुक्कुटमुलु कूयु जाड विनिन।

आमनिकि गोकिलांगन यलरु भाति
मैमरचिपोदु शिशिरागममुन नीवु
माट वेंबडि माट रामानदेमो ?
पोम्मु निलुवकु बरिमीद रोम्मु विरिचि
निलिचि कूयुमु, नीमोद बलमु जूप
पुंजोकटि वच्चु, दानि तो बोरुचुंडु
वेळ, वेनुकंज वैचि निन्बेंचिनट्टि
वानि कपकीर्ति देच्चि यव्वानि चेत
दिट्टुलंदिनि ब्रतुककु तिविरि चंपु
टोंडे चच्चुटयोंडे चेयुदुवु गाक।
विधि वशम्मुन मा तेलगु वेलमदोरल
शौर्यमुलु वच्चि डागे, त्वच्चरणबद्ध
खड्गपुत्रिकयं, दीवुगडन चेसि
पंचिपेट्टुमु यशमु निन्बेंचिनट्टि
दोरलकुन् गुक्कुटपुरेड ! मरचिनाड
नेरुगुदुवो ? लेदो ? कंठमुन् दरुगुनट्टि

५. संक्रान्ति

हे मुर्गे*! तुम बड़े सुकृति हो, पुण्यवान हो। जान-बूझकर फाँसी पर चढ़नेपर भी इस उत्तरायण पुण्यकालमें मृत्यु दुर्लभ है। ऐसे मकर संक्रमणके समय तुम तलवारके वारके सामने सिर दे, युद्ध क्षेत्रमें मरनेवाले वीरोंके भोग्य और अन्योंके लिए दुर्लभ स्वर्गको प्राप्त करते हो ॥१॥

युगल पम्व (एक वाद्य-विशेष) को सुननेवाले गणाचारी§ के समान, प्रथम वर्षाको लानेवाले मेघोंकी गर्जना सुननेवाले मयूरकी भाँति दूसरे मुर्गोंकी बाँग सुनकर तुम्हारा शरीर फूला नहीं समाता है।

वसन्तके आगमनपर प्रसन्न होकर देहकी सुध भुला देनेवाली कोयलकी भाँति, शिशिर ऋतुके आगमनको देखकर तुम भी बाँग दे उठते हो।

जाओ, जाओ, रुको मत। युद्ध क्षेत्रमें खड़े होकर, छाती तानकर, ललकारो। तुम पर अपना बल दिखाने एक दूसरा मुर्गा आएगा। उसके साथ जूझते समय, पीछे कदम रख, तुम्हें पालनेवालेको अपयशका भागी बनाकर और उसकी गालियाँ सुननेकी लिए जीते मत रहो। मरो या मारो।

दुर्भाग्यके कारण हमारे 'वेलम' राजाओंका शौर्य तुम्हारे पैरसे बँधी तलवारके आश्रयमें आया, वहाँ स्थान ग्रहण किया। उसे

---

*आन्ध्र प्रान्तमें संक्रान्तिके दूसरे दिन मुर्गे लड़ानेकी प्रथा है। मुर्गेके पैरोंमें छोटे-छोटे चाकू बाँधे जाते हैं। जबतक कोई मुर्गा मर नहीं जाता तब तक लड़ाई खत्म नहीं होती।

जनश्रुतिके अनुसार युद्धमें लड़कर मरनेसे वीरोंको स्वर्गकी प्राप्ति होती है। भले ही लड़नेवाला मुर्गा ही क्यों न हो।

§ गणाचारी—आन्ध्रके प्रत्येक गाँवमें ग्राम देवताके रूपमें शक्तिकी पूजा होती है। उस देवताके पुजारीको गणाचारी कहते हैं।

कत्ति कालिकि गलदंचु, नेत्तुरट्लु
वरदलै पारुचुन्ननु, व्रालिपोक
मेडनु रिक्किकचि, रिव्वुन मीदिकेगिरि
कंठमुन दुदि यूरुपु गलुगुदाक
बोरि मडसेदवो कोडिपुंजुरेड ! ॥१॥

पट्नमुन विद्य गरचेडि बालकुंड !
पोत्तमुन, कय्यवारिकि, बेत्तमुनकु
सलुपु दास्यम्मु नुंडि मोक्षम्मु नंदि
चिन्नि चेल्लेलिकिन् वन्ने वन्ने गाजु
बोम्मलन् गोनि मी ग्राममुनकु बोम्मु।
चिन्नि चेल्लेलि मुच्चट चेयिदमुलुनु
माटलाडंग निनु बिल्चुनट्टि तम्मु
गुर्र विसिविपुलनु, नूरि मरिनीड
जरुगु लोकवार्ता प्रशंसलुनु वेंचि
युंडे नानंदवनधि निन्नोललार्प
देजमेडलेनि नीकु संदीप्तिनोसगि
बुद्धिकि विकासमुत्साहमु घटिंप
दनिवि तीरंग नचट स्वातन्त्र्य वायु
लनु बील्चुमु मी पोलम्मुलनु दिरिगि
चीकुनंजिन्त दिगद्रावि चिन्नवाड !
जननियुनु जन्मभूमियु स्वर्ग सुखमु
ग्रिन्दुवडजेयुनन विनुचुंदुवुगद
बालुडा ! चूचिरम्मु मी पल्लेटूरु ॥२॥

———

(उस शौर्यको)ग्रहण कर, तुम्हें पालनेवाले उन राजाओंको यश बाँट दो। हे कुक्कुट राजा ! भूले तो नहीं वह बात ? गलेको कतर डालनेवाली तलवारको प्रतिपक्षीके पैरपर देखकर भी, खूनकी बाढ़को देखते हुए भी, प्रतिपक्षी पर छलाँग मारकर, आखिरी साँस तक लड़कर मरोगे या यशस्वी बनोगे ? देखेंगे। ।।१।।

नगरमें शिक्षा प्राप्त करनेवाले हे बालक ! पुस्तक, गुरु और छड़ीकी दासतासे मोक्ष प्राप्तकर,छोटी बहनके लिए रंग-बिरंगी चूड़ियाँ और खिलौने लेकर (संक्रान्तिके शुभ समयमें) अपने गाँव जाओ।

छोटी बहनकी प्यारी-प्यारी चेष्टाएँ, अपने साथ खेलनेके लिए बुला-बुलाकर तुम्हें उबा देने वाले छोटे भाईकी जिद्द,गाँवके वटवृक्षकी छाया में होनेवाली लोक वार्ताओंकी चर्चा; ये सब तुम्हें आनन्द-सागरमें सराबोर कर देनेकी प्रतीक्षामें हैं।

तेजोरहित हो तुम्हें सन्दीप्ति देकर, बुद्धिको विकसित और उत्साहको संगठित करनेवाले वहाँके स्वातन्त्र्य-वायु-प्रसरणमें विचरण करो। चिन्ता और व्यथाको दूरकर स्वेच्छासे अपने खेतोंकी हवा खाओ हे बच्चे !

सुनते हो न कि जननी और जन्मभूमि स्वर्ग-सुखको भी नीचा दिखाते हैं। जरा इस तथ्यकी सचाईको अपने गाँव जाकर देख आओ ।।२।।

६. अज्ञानकृतमु

सोंपुलु गुल्कुनोंडोरुल चूड्कुल प्रेम दोलंक गालिकिन्
गंपमु जेंदु बाहुलतिकल् पेन वैचि, जनम्मु चूड्कि मो
हिंपग जेयु पूवुगव येकतमट्टुल नेकशय्य नि
द्रिंपग नोक्कदानिविडदीयग जेयेटुलाडे? पुत्रका! ॥१॥

कनुलु मोगिड्चि कूर्कु तन गादिलिबिड्डनु, नीवु त्रुंचिपो
यिन, गनि तल्लितीव निलुवेल्ल जलिंपगनेट्लु विह्वलिं
चुनो, कनुगोंटिवे? कडुपुचुम्मलु चुट्टग बाष्प बिन्दुवुल्
कनुगोनलंदु निंडि तोलकन् गनुवारल गुंडे नीरुगन्! ॥२॥

कटकट! निद्रलेचि तन गादिलि चेल्लेलु गानरामि, मि
क्कटमगुनार्ति जेंदि, नवकम्मुलु मायग दोंटिमेनि मु
च्चटलकुबासि, यंतटि विषादमु जेंदुनो? जंटपूवु; नी
कटिकतनम्मु गन्न गोडुका! भयमय्येडु नेमिसेतुरा! ॥३॥

वेकुव जल्लगालि कनुविदु घटिंचेडि पूवुजंट, डो
लाकलनम्मुनन्, मिगुल लालस सल्पुचु निद्र पुच्चि, यि
ट्डे कडकेगे; संजनदि यीडकु ग्रुम्मरवच्चिनप्पुडि
य्याकुलपाटु सूचि तनया! येटुलौनो? विषादवेदनन् ॥४॥

निन्नटिसंज जेल्लि 'जननी! यवि कोसियोसंगु' मन्न नी
कोन्नन लेल्लि विच्चिचननु गोसि योसंगेदनंटि, शय्य पै
कन्नुलु विच्चि जालकमु कन्तल नी दुरवस्थ चूचि, या
चिन्नदि येंत पोरिडुनो? चेंपलनश्रुलु जालु वारगन्। ५॥

६. अज्ञानकृत

हे पुत्र ! सौन्दर्यसे खिलखिलाते, एक दूसरेकी चितवनोंमें प्रेमके भावोंके उमड़ते, हवासे कम्पित बाहुलताओंसे एक दूसरेको कसकर, देखनेवालोंको मोहित करते हुए एकान्तमें मानों एक शय्यापर लेटे हों, ऐसे पुष्प युगमेंसे एकको विलग करनेके लिए तुम्हारे हाथ कैसे आए ? ।।१।।

आँखें मूँदकर सोनेवाले अपने लाड़लेके तुम्हारे तोड़नेपर देखा ! वह लता-माई शरीर-भरके काँपते कैसे विह्वल बनी हुई है ? दुख भारसे कलेजेके टुकड़े होते आँखकी कोरोंसे आँसू बहाती, उस लताको देखो। देखनेवालोंका दिल भी पिघला जा रहा है ।।२।।

हाय ! नींदसे जागकर जोड़का फूल अपनी लाड़ली बहनके दिखाई न देनेपर अत्यधिक आर्त बन, मृदुताको खो, कौतुकोंसे हाथ धो, कितना विषाद-मग्न होगा ? रे पुत्र ! तुम्हारी निर्दयताके कारण, आशंका हो रही है। क्या करूँ ? ।।३।।

ठण्डी-हवा, आँखोंको आनन्द देनेवाली फूलोंकी उस जोड़ीको, बड़े लाड़से डालियोंके झूलोंमें सुलाकर प्रातः ही चली गई है। शामको जब वह लौट आएगी तो इस दुर्घटनाको देखकर विषाद-वेदनासे उसकी क्या हालत होगी ? ।।४।।

कल शामको तुम्हारी बहनके पूछनेपर मैंने कहा 'जब ये सभी खिल उठेंगे, तभी तुम्हें यह फूल तोड़ दूँगी।' अब सेजसे उठकर जालीके रन्ध्रोंसे इधर देख, उस फूलको न देख, गालों परसे आँसू बहाती वह कितना रोएगी ? ।।५।।

वेंगलि ! नीकिदेमि यविवेकमुरा ? परुवंपु मोग्गदो
यिगनि निन्न 'वीनि निक नेव्वरु मुट्टकु' डंचु गट्टु ग
ट्टें, गिरिगीसि, मंत्रमु पठिंचचु, देनियलानवच्चु ना
भृंगकुमारुडेंत दुरपिल्लुनो ? विच्चिनपूवु गानमिन् ।।६।।

चल्लनिप्रेम रसमु बै
जल्लुचु रेयेल्ल साके चन्द्रुडु वीनिन्
बिल्लड ! मापटिकिन् जि
तिल्लुचु दन पूवुगनमि देसल बरचुगा ! ।।७।।

कादनलेनुगानि, यपकालपु मृत्युवु वातबड्डनी
गादिलिबिड्डके वगवगा निनु ; ना सुतु नीदु बिड्डनि
गा दलपोसि यूरडुमु कन्नुलनीरिडकम्म ! तीव मु
त्तैदुव ! पेद्दवानुवुगदा ! कलकालमु नीकु मेलगुन् ।।८।।

————

'रे बेवकूफ! यह कैसा अविवेक है तुम्हारा? कलीको देख, अब इन्हें किसीको छूना नहीं चाहिए' यह नियम लागू कर रेखा बद्ध कर मन्त्र पढ़ जानेवाला वह भृंगकुमार आज मधु का स्वाद लेने आएगा। खिले फूलको न देखकर, वह कितना व्यथित होगा?।।६।।

रातभर शीतल प्रेमरसको छिड़कते रहकर चन्द्रमाने इन्हें पाला है। रे बच्चे! आज रातको उस फूलको न देख, चारों तरफ उसकी खोज करता रहेगा ।।७।।

अकाल ही मृत्युके मुँहमें पड़े अपने लाड़लेके लिए बिलखने-वाली तुम्हें मना तो नहीं कर सकती। पर हे लता-सुहागिन! मेरे बच्चेको ही अपनी सन्तान समझकर धीरज धर लो न! आँसू मत भरो न! चिरकाल तक तुम्हारी भलाई हो ।।८।।

---

७. सौन्दरनन्दमु (द्वितीय सर्ग)

भिक्षागमनमु

चेविदाकन् गोनयम्मु तुंटविलु नीचेबूनि यालीढपा
दविलासम्मुग निल्चिपोल्चु सोबगुन् गंदोयिकिन्विदुगा
नवलोकिंपुचु, बूवुटम्मु रति नीकंदिप, डेंदम्मुलन्
गवियन्नाटेडि लक्ष्यशुद्धिकि नमस्कारंबु मीनध्वजा! ॥१॥

कलडु महितात्मुडैन शाक्यऋषिकोक्क
सवति तम्मुंडु कान्ति निस्तन्द्रुडतडु
नंदुडनु कोडे प्रायपुटंदगाडु
सार्थकारव्य सुन्दरि वानि यतिवमिन्न ॥२॥

केळी मंदिरमंदु बुष्पलतिका क्रीडानिकुंजम्मुलन्
बालास्निग्धकपोलदर्पण रुचिन् भाविंपुचुन् जुंबन
व्यालोलुंडगु नंदसुन्दरु स्मरध्यानम्मुनन् बुद्धु ध
र्मालापम्मुलु वीनुदोयिबडुनो यात्मन् ब्रवेशिंचुनो! ॥३॥

पन्तमु गर्वरेखयुनु भासिलु मानिनि, मानसंपदन्
गान्ति दलिर्चु भामिनि, विकाससुहासिनि, नात्मसुन्दरिन्
सन्ततसेवलं दनुपु नंदुनकुन् सुगतप्रचारमो
क्कित येरुंगनैन, रुचियिंचुने वानिकि मुक्तिमार्गमुल्? ॥४॥

पातरलाडु तद्भ्रुकुटिवल्लि, येटुल् चलिंचु नट्टुलन्
जेतमु तांडविंप मरचेन् नृपसूनुडु विश्वमेल्ल, वे
लातिगमौ तदीयरुचिरांग विलाससुधांबुराशि वी
चीतति दोप्पदोगि निलचेन् जेलिचूपुल पापपोलिकन् ॥५॥

नडपुल राजहंस, तेलिनव्वुल वेन्नेलवाक, प्रेमलू
रेडु नुनुबल्कु देनेपेर, रेम्मलुवेचु विलास वल्लि, व्रे
ल्मिडि हृदयम्मु नुच्चि चनुमेलिमिचुपु सुमास्त्रमैन या
पडतुक नंदभास्करुनि बायगनोर्वदु छाययुंबलेन् ॥६॥

७. सौन्दरनन्द (द्वितीय सर्ग)

भिक्षा-आगमन

[सर्गके प्रारम्भमें प्रार्थना-पद्य]

हे मीनध्वज! एक हाथमें इक्षु-धनुष और दूसरे हाथमें कान तक खींची गई डोरको लेकर, आलीढ़ पाद* हो सविलास खड़े होनेवाले तुम्हारे सौन्दर्यको, आँख-भर निहारते हुए, रतिदेवीके दिए पुष्पबाणको हृदयोंमें घँसा देनेवाली तुम्हारी लक्ष्यशुद्धिको नमस्कार है ।।१।।

महानात्मा शाक्य ऋषिका एक सौतेला भाई है। नन्द उसका नाम है। वह कान्तिमान और यौवनसे पूर्ण सौन्दर्यवाला है। उसकी पत्नी सुन्दरी सार्थक नाम वाली है और वह युवतियोंमें श्रेष्ठ है ।।२।।

केलिमन्दिरमें और पुष्पलतिकासे युक्त क्रीडानिकुञ्जोंमें, बालाके दर्पण-सम स्निग्ध कपोल-रुचियोंकी भावना करते हुए, चुम्बन क्रियामें मग्न रहनेवाले और स्मर-ध्यानमें अपनेको भूले हुए अिन नन्द सुन्दरके कानोंमें क्या बुद्धके धर्मवचन प्रवेश कर पाएँगे? इन धर्म वचनोंका उनकी आत्मा तकका प्रवेश हो सकेगा? ।।३।।

हठ और गर्वरेखासे विभूषित मानिनी, मान-सम्पत्तिकी प्रभाववाली भामिनी, विकास-सुहासिनी, अपनी आत्म-सुन्दरीको निरन्तरकी सेवाओंसे तृप्त करनेवाले नन्दको, जो सुगतके धर्म-प्रचारसे अनभिज्ञ है, ये मुक्तिमार्गके उपदेश कहाँसे पसन्द आएँगे! ।।४।।

सुन्दरीकी भृकुटि लताके सञ्चलनके साथ मनके नर्तन करने पर वह राजकुमार सारे जगको भूल बैठा। वेलाको अतिक्रम करनेवाले उसके रुचिर अंगविलास रूपी सुधांबुराशिके वीचिसमूहमें फँसकर तैरता रहा। ।।५।।

चालमें राजहंस, स्वच्छ हास्यमें ज्योत्स्ना-प्रवाह, प्रेमनिष्यंदिनी मधुर वाणीका मधुकोष, नित नई कोंपलोंवाली विलासवल्ली, पलभरमें हृदयके आरपार जानेवाली प्रेमभरी चितवनरूपी सुमास्त्र वाली वह युवती, नन्दभास्करसे छायाके समान विलग होकर नहीं रह सकती ।।६।।

---

* बाण चलानेके लिए वाम चरनको आगे रख धनुर्धरके खड़े रहनेकी मुद्रा।

पलुकुल् सेतलु नेम्मनम्मुलोकटै, भाविंपगारानि कू
र्मुलपेर्मुल्, वलकाकलन् गसरुटल्, रोषारुणाक्षम्मुगा
दिलकिंपन् बतिमालुटल्, पुलकलुद्दीपिंपगाजेयु मु
द्दुलु, गिलिगिंतलु कौगिलितलुनु ब्रोद्दुल्पुच्चु नाजंटकन् ।।७।।

तानासुन्दरनंदु, डव्वेलदिया तन्वंगलावण्य ली
लानंदैकनिधान, मोंडोरुल प्रेमालापकेळी विनो
दानूनानुभवम्मुला मदनविद्यादेशिकम्मुल्, समुल्
कानन् रारु गदोयि, कामिजन लोकम्मंदु ना दोयिकिन् ।।८।।

चिवुराकुबाकु दाल्चिन वजीरुनकु द
त्प्रमदकु लक्ष्यभूतम्मुनाग,
नत्यन्तमोदम्मु नित्यमांगळ्यम्मु
दलदाचुकोन्नट्टि नेलवनंग,
नुर्मिपगारानि युत्साहविजयमुल्
तोडुनीडै कूडियाडे ननग
गनिविनि येरुगनि गगनपुष्पमु नूत्न
सौरभम्मोक्कट गूरे नाग,
गौतुकमु मोर्लिपचु नोकळ्ळोकळ्ळ
हास वीक्षणकिलिकिंचितादुलेल्ल
मधुर मधुरमुल् गाग ना मिथुनमोप्पु
नासतीवलु ननुच प्रायंपुवेळ ।।९।।

सडलनि कौगिलितलकु जंदनचर्चलु पेटुलेत्तगा
नेडपडनट्टि चूपुलकु निर्वुर मैजिगि विन्दुसल्पगा
नुडुगकपल्कु चाटुमधुरोक्तुल नात्मलु हत्त, सीम मी
रेडु प्रणयांबुराशि विहरिंचुनु दन्मिथुनम्मु विन्तगन् ।।१०।।

मानवलोकनायककुमारवतंसमतंडु नन्दनो
द्यानविहारि दैवतलतांगियो नाजनु गान्तगूडि, यी
मानवकोटि जेरक यमर्त्युल गूडक योप्पे भूतसं
तान नवीन सृष्टि परिणाममिटुल् नेरवेरेनो यनन् ।।११।।

वाक्, क्रिया, मनके एक होनेपर, कल्पनासे परे प्रेम-माधुर्यका अनुभव करते, रूठना डाँटना, क्रोधसे लाल नेत्रोंसे देखनेपर विनय करना, पुलकित करनेवाले चुम्बन, गुदगुदियाँ, आलिंगन इन्हीं कार्योंमें उस जोड़ीका सारा समय गुजरता। ।।७।।

स्वयं तो सुन्दरनन्द है और वह शारीरिक लावण्य, लीलाओं और आनन्दका एकैक निधान है। परस्परके प्रेमालाप केलि, विनोद, अन्यून अनुभव, मन्मथ विद्याके उपदेशक हैं। उस जोड़ीका कामुक-जन-लोकमें कोई सानी नहीं दीखता। ।।८।।

पल्लवको ही कटार बनाए उस प्रेम वजीर और उसकी प्रमदा के लक्ष्य (उदाहरण) के रूपमें, अत्यन्त मोद और नित्य सौभाग्यके स्थिर निवासके रूपमें, अनुपम उत्साह और विजयके एक साथ रहने-वालोंके रूपमें, अपूर्व आकाश पुष्पके नूतन सौरभके संयुक्त होनेवाले रूपमें एक दूसरेके केलि-विनोदका अमित अनुभव हाव भावोंके द्वारा करते हैं और इस तरह मनमें कौतुक उत्पन्न करते समय, आशारूपी लताके पनपते वयमें (यौवनमें) वह दम्पत्ति बड़ा मधुर जीवन यापन कर रहा था। ।।९।।

ढीले न पड़नेवाले आलिंगनोंसे चन्दनके लेपके चूर्ण हो गिरते,विलग न होनेवाले चितवनोंको एक दूसरेके शारीरिक सौन्दर्यसे प्रमोद उत्पन्न होते निरन्तरकी तरह-तरहकी मधुर उक्तियोंके मनप्रसन्न करते,सीमाओंको लाँघ जानेवाले प्रणयसागरमें वह युगलजोड़ी निराले ढंगसे डूबती-उतराती है।१०

मानवलोकके राजकुमारोंमें श्रेष्ठ वह मानो नन्दनवनमें विहार करनेवाली देवता-स्त्री हो उस सुन्दरीसे मिलकर, न तो मर्त्य ही रहा, और न अमर्त्य ही ऐसा मालूम होता है, मानो यह सब भूत समुदायकी नवीन सृष्टिका विचित्र परिणाम हो। ।।११।।

मेलॅचि नन्दुंडु पूलु गोसियोसंग
        सरमुलंदमुग सुन्दरि रचिंचु,
मेलत वर्णम्मुलु मेळविंचियिडंग
        हरुवुमै नतडु चित्तरुवु व्रायु,
बति सुकुमार भावमु वचिंचिन ननु
        रूप पद्यमुन गूर्चुनु लतांगि,
अतिव चक्कनिराग मालापिंचिन वीण
        पलिकिंचु नतडु मै पुलकरिंप,
नेरसेरल नन्दुनि चूपुलिंति यान
नेंदुनकु गेंपुल निवाळुलेत्त, नतिव
कज्जलपु जूडिक प्रियुनि वक्षः कवाटि
गट्टु दोरणमुलु नल्लकल्वपूल ।।१२।।

प्रालेयगिरिकंदराविनोद विहार
        परुलैन सिद्धदंपतुलनंग,
विबुध तरंगिणी वीचिकाडोलल
        दूगेडि रायंच दोयियनग,
गविमनः पंकजासवसिक्तमै रसा
        ग्रमुन नाडेडि पदार्थमुलनंग,
नानंद परिफुल्ल मौनींद्रदहारता
        राध्वमंदाडु जीवात्मलनग,
जीकुचिन्तल दिगद्रावि, चेन्नुमिगिलि,
हृदयसंवेद्यमय्यु, नात्मैकगम्य
मैन यद्वय सौख्य रसामृतम्मु
ननुभवितुरु वारु निरंतरमुग ।।१३।।

ब्रतुकु निक्कम्मयेनि यव्वारिपट्ल
विरति लेनि स्वप्नम्मुगा जरुग बोलु,
ब्रतुकु निक्कमुगाक स्वप्नमगुनेनि
सत्यमै तोपबोलु नाजंपतुलकु ।।१४।।

नन्दके श्रेष्ठ फूलोंके चुन देनेपर, सुन्दरी सुन्दर हार गूँथती है। सुन्दरीके रंग मिला देनेपर वह मनोज्ञ चित्र रचता है। पतिके किसी सुकुमार भावके कहनेपर वह उसे अनुरूप छन्दमें जुड़ाती है। पत्नीके सुन्दर रागका आलाप लेनेपर वह शरीरको पुलकित करनेवाले रूपमें वीणा बजाता है। रतनारी रेखाओंवाली नन्दकी चितवन सुन्दरीके मुखचन्द्रकी मानिकोंकी आरती उतारे तो सुन्दरीकी कजरारी चितवन प्रियतमके वक्षःकपाट नीलोत्पलोंकी बन्दनवारसे सजाए। ।।१२।।

मानो वे हिमगिरिकी कन्दराओंमें विनोद-विहारमें तत्पर सिद्ध दम्पति हों, आकाश गंगाकी लहरोंपर झूलनेवाले राजहंसकी जोड़ी हों, कविमन-पंकजके मधुसे सिक्त हो रसनाग्रपर नाचनेवाले वाक् और अर्थ हों, आनन्द परिफुल्ल मुनिनाथोंके हृदयाकाशमें विचरनेवाले जीव और आत्मा हों। इस प्रकार चिन्ता-दुःखसे परे हो, सौन्दर्यमय बन, वे दम्पति निरन्तर ही हृदयसंवेद्य और आत्मैक गम्य अद्वैतसुखके रसामृतका उपभोग करते रहते हैं ।।१३।।

यदि जीवन ही सत्य है तो वह उनके लिए अविरत स्वप्न-सा अथवा जीवन सत्य न होकर स्वप्न है तो वह उनके लिए सत्य-सा दिखाई देता है ।।१४।।

ऐहिकविचारमुल नेल्ल नवल द्रोचि
भंगमेरुगनि यानन्दपरमयोग
रति मेलंगुचु, भानुनि राकवोक
लरयनेरनिवेळ सुन्दरयि नोकट ।।१५।।

तनकुन् बापट चक्कदिद्द, सुमनोदामम्मु वेणीभर-
म्मुन गूर्पन् गलपम्मुलद्द, दिलकम्मुन् दीर्प, विंजामर
म्मुनु दाल्पन् सडिसन्न नन्दुनि करांभोजातयुग्मम्मुनन्
वनितारत्नमु दर्पणम्मु निडि निल्वं जेसि तानन्तटन् ।।१६।।

अद्दमुलोन नीडयुनु, नद्दमु दाल्चिन नाथु मोमुनन्
मुद्दुलु गुल्कु मीसमुल पोल्पु गनुंगोनुचुन्, मृगीमदं
बद्दिन यंगुळीकिसलयम्मुन जेक्कुल बत्रभंगमुल्
दिद्दुकोनंदोडंगे सुदतीमणि नेरुपुमीर नव्वुचुन् ।।१७।।

ललन कपोलदर्पणमुलन् रचियिंचेडि पत्रभंगमुल्
तेलितळुकोत्तु मुत्तियपु दीधितुलन् गडकोत्तु लेत न
व्वोलयग जूचुनंदुडपुडु ह्हनियूदिन, नूर्पुतुंपुरुल्
तळतळलाडुचुन् मेरयु दर्पणमुन् गनुमाय जेसिनन् ।।१८।।

नातियु नाथु तुंटरितनम्मुनकुन् मदि मेच्चुपुट्टियुन्
जेतमु डाचि, रेप्पतुद जिंदेडु चिर्नगवर्प्पाळिचि, रो
षातिकषाय वीक्षणशितास्त्रपरंपर जार, गेंपुडाल्
वातेर कंपमंद गुटिल भ्रुकुटीकललाटपट्टयै ।।१९।।

'ई पलुगाकिसेतलिवियेल्लनु नेर्तुवु लेस्सलाये, ने
नोपनु जु' म्मटंचु श्रवणोत्पलमुन् गोनिवैचे गान्तुनिन् ;
नूपुर कंकणक्वण मनोहरयानमु मीर मारुमो
मै पेडबासिपोवुसति कड्डुमुगाजनुदेंचि नंदुडुन् ।।२०।।

सभी सांसरिक दुःखोंको दूर हटाकर, अविच्छिन्न आनन्द परम योगसे आसक्त होकर, सूर्यके आवागमनको न जान सकनेवाली वेलामें, एक बार सुन्दरी ने.....॥१५॥

नन्दकी माँग सँवारकर, वेणीमें फूलोंका हार खोंसकर, अंगराग लगाकर, ठीक तौरसे तिलक लगाकर और पंखा झलनेके बाद, इशारेसे ही, कर-कमलोंमें दर्पण देकर नन्दको खड़ा किया और स्वयं..॥१६॥

दर्पणमें अपना प्रतिबिम्ब, दर्पण लेकर खड़े हुए प्रियतमके सुन्दर मुखड़ेपर प्यारी-प्यारी मूँछोंकी सुन्दरता निहारते हुए, मुस्कराते हुए मृगमदसे लगे अँगुली किसलयसे गालोंपर बड़ी चतुरतासे मकरिका पत्रों* को रचने लगी ॥१७॥

सुन्दरीके कपोल दर्पणोंपर बनते मकरिका पत्रोंको, स्वच्छ मोतियोंकी कान्तियोंको मात करनेवाली मुस्कुराहटके साथ देखनेवाले नन्दने दर्पणपर जोरसे फूँक मारी। उसके छींटोंने दर्पणको धुँधला बनाया। ॥१८॥

सुन्दरी, प्रियतमके नटखटपनपर मन-ही-मन प्रसन्न हुई, पर अपनी इस प्रसन्नताको उसने छिपाकर, पलककी कोरोंसे झलकनेवाली मुस्कराहटको बाहर न छलकने देकर, रोषके कारण अत्यधिक अरुण बनी चितवनकी पैनी अस्त्र धाराका प्रयोग करते हुए अरुणाधरोंको कम्पित कर तथा कुटिल भुकुटियोंसे युक्त ललाटवाली बनकर, इस प्रकार कहा...॥१९॥

'ऐसे नटखट कार्योंको तो खूब जानते हो, ठीक है पर मैं इन्हें सहनेकी नहीं।' यह कहकर श्रवणोत्पलसे कान्तको मारा। नूपुर और कंकणोंके झनकारके साथ चटकते-मटकते, मुँह फेरकर चली जानेवाली प्रियाका रास्ता नन्दने रोक लिया। ॥२०॥

*मकरिका पत्र—मछलीके आकारका बना हुआ चन्दनका चिह्न जो प्राचीन कालमें स्त्रियाँ अपनी कनपटियोंपर बनाती थीं।

पैटचेरंगु पट्टिनिलुपन्, जेलि कोंगु तेमल्चिकोंचु 'मु
म्मादिकि नन्नु मुट्टेदु सुमा ! यिदेयो' ट्टनि मुट्ट बल्क, 'स
य्याटकु नुह् हटन्न यलुका ? मुलुकुल् वले डेंद मुच्चि पो
नाटेदु वाडिचूपु ललना !' यनि मुट्टेनु दत्पदद्वयिन् ।।२१।।

मौळितल प्रफुल्ल कुसुमम्मुलु मुन्नुग राल, नागतनि
न्नालि तदंघ्रुलन्, वेरपु पैकोनु चूड्क मोगम्मुनेत्ति 'न
न्नेलिन देवि ! चूपुटुरुलेल बिगिंचेदु मोमुद्रिप्पि, ग
ग्गोलुग द्वन्मनः प्रियशकुन्तमु नाहृदयम्मु कूयिडन् ।।२२।।

दोसमुगल्गे नावलन दोसिलियोग्गिति नेलुकोम्मु, नी
दासुड'नन्न कान्तुगनि, तन्वि पकालुन नव्वि 'यिन्तलो
ने सडलेन् गदोयि, यिसिसी ! मर्नबिकर्मुलितपाटिवा,
कासरकूसरेंति, वनि, कौगिर्टिकि डिगि चेक्कुदुव्वुचुन् ।।२३।।

'कटकट ! पापपुं गिनुक गैकोनि, यन्नपुगेंपुवन्नियन्
बुटपुटनैन मत्प्रियु, कपोलमु वेल्वेलवारजेसितिन्
गटिकयेडंददान' ननि, कंदिन नन्दुनि निडुडेंद मू
रटगोन, जेक्कुटद्दमुल रागमु चिंदग मुद्दुपेट्टुचुन् ।।२४।।

'सांत्वनमृदूक्तिचतुर ! विस्रंभकार्य
निपुण ! मन्नाथ ! दरिलेनि नी यगाध
हृदयराज्य मेकच्छत्र मेलजूत,
नेट्लु मन्नितो ? यी लघुहृदयुरालि ।।२५।।

अपराधप्रियकारिता नवनवंबौ प्रेम लीलासुधन्
गृपमै मच्चपलांतरंगमुन निक्षेपिंचि, यी दासुरा
लिपयिन् जूपु ननुग्रहम्मुनकु गल्पितुन् मदात्मांबुज
म्मुपचारम्मुग नल्पमंचनक येट्लो स्वीकरिंपंगदे।' ।।२६।।

अनि मनः प्रियमुग्ध भाषणमु ललर
नक्कुनन् ग्रालिन लतांगि नात्म जेर्चि,
पापटन् जक्कदिद्दुचु फालतलमु
मुद्दुगोनि, तेरकोन नातिमोमु गांचि ।।२७।।

आँचल पकड़कर नन्दके रोकनेपर अपने आँचलको छुड़ाते हुए उसने कहा–"देखो, तुम्हें मेरी कसम है, तुम मुझे छूना मत।" अरे विनोदके लिए फूँका तो इतनी रूठ गई और तुम तो तीरों-सी पैनी-चितवनसे मेरा हृदय बेध रही हो।" यह कहते हुए नन्दने उसके चरण छू लिए। ।।२१।।

अपने सिरके प्रफुल्ल कुसुमोंके पहले गिरनेपर उसके पैर पड़, सहमी हुई दृष्टिसे मुख ऊपर उठा–'हे मेरी स्वामिनी! मुँह फेरकर चितवनोंका फन्दा क्यों कस देती हो, जिससे तेरे मनका प्रिय, शकुन्त पक्षी रूपी मेरा हृदय चिल्ला उठे, तड़प उठे।" ।।२२।।

'मुझसे अपराध हुआ है, हाथ जोड़ता हूँ, मेरी रक्षा करो न। मैं तो तुम्हारा दास हूँ।' ऐसा कहनेवाले कान्तको देख, वह खिलखिला उठी और बोली, 'बस! इतनेसे ही ढीले पड़ गए? छि: हमारे मान इतनासा है? इतने सहम गए।' उसे आलिंगनमें ले, गालोंपर हाथ फेरते हुए कहा। ।।२३।।

हाय-हाय! इस पापी क्रोधने मेरे प्रियके अनोखे मनोहर अरुण कपोल फीके बना डाले। कितनी निष्ठुर हूँ। डपटे हुए नन्दके हृदयको प्रशान्त करते, कपोल-दर्पणोंको चुम्बनोंसे अरुण करते हुए कहा.....।।२४।।

सान्त्वना देनेवाली मृदूक्तियोंमें चतुर! विस्रम्भ कार्योंमें निपुण! हे मेरे नाथ! असीम और अगाध तुम्हारे हृदय राज्यपर एकछत्र रूपसे राज्य करना चाहनेवाली इस लघुहृदयाको कैसे क्षमा कर दोगे? ।।२५।।

अपराध करनेसे और प्रीत करनेसे नव नव बने इस प्रेम-लीलाकी सुधाको कृपाभावसे मेरे चपल अंतरंगमें धरोहरके रूपमें रख, इस दासीपर दरसाने वाले अनुग्रहके लिए हृदयकमलको सेवामें समर्पित करती हूँ। इसे अल्प न समझ स्वीकार करोगे न! ।।२६।।

इस प्रकारके मनके प्रिय और मुग्ध वचनोंसे प्रसन्न करते हुए, वक्षस्थलपर झुकनेवाली लतांगीको आलिंगनमें लेकर माँग संवारते हुए उसके ललाटको चूमते हुए तथा केशराशिसे घिरे हुए उसके मुखको देखते हुए नन्दने कहा.....।।२७।।

'अलुक मोयिळ्ळ माटुन द्वदास्य विधुंडु मुहूर्तमुंडि यु
ज्ज्वलदरहास चन्द्रिकलु पर्वंग वेंडि प्रसन्नुडौट यो
कलिकि ! विनूतनोन्त्सवमु गादोको ? यिर्वुर मिट्लु साकु पे
न्वलपुलकल्पवल्लि कतिवा ! यिवियेगद दोहदक्रियल् ।' ॥२८॥

पाणिद्वन्द्वमु नुनि कौगिट गर्दिपन जूतुनिन्, नीदु वि
न्नाणंबुन् मरि दोयिलिंपदलतुन्, ना चूड्कुलन् द्रावुदुन्
नी नव्यामृतवीक्षणम्मुलनु, नी निश्वास सौगंध्य मा
घ्राणिंतुन् मेयियेल्ल घ्राणमुलुगा, गैमोड्तु नीचेल्वुकुन् ॥२९॥

रागरंजित मन्मनोरत्न मित
यित शकलम्मु लोर्नारिचि यिति ! नीदु
कंठहारम्मु नोर्नरितु, गडमयिडक
विनुतु हृदयप्रबंधम्मु विशदफणिति ! ॥३०॥

वेलदि ! यी रागलतलु पुष्पिंचुनट्टु
ली मनोरथमुलु फलयिंचुनट्लु
दरु लोरसि पारु नी ममता स्रवंति
देलिपोदमु पेरतलंपेल मनकु ? ॥३१॥

अरमरलेनि कूरुमुल नाडुचु बाडुचु, ब्रेमशीधुपा
नरतुलमै चरितमु, मनस्विनि ! चेक्कुल बत्रभंगमुल्
विरचन सल्पुको 'म्मनुचु' वेंडियु मंडनसाक्षिभूतमुन्
सरसुडु दालिच निल्चेनु हसन्मुखुडौचु मेरुंगुटद्दमुन् ॥३२॥

दर्पणमु दालिच निल्चिन धवुनि मोमु
नेडनेड गनुंगोनुचु रचियिंचुकोनिये
जेलिय ननुजेक्कुलंदु विशेषकम्मु
नेम्मोगम्मु सशैवलाब्जम्मु दोरय ॥३३॥

हे प्रिये ! 'प्रणयक्रोध रूपी मेघोंकी आड़में तुम्हारे मुख चन्द्रका थोड़ी देर रहकर, फिर उज्ज्वल-मन्दहासकी चन्द्रिकाओंको बिखेरते दर्शन देना, क्या एक विनूतन उत्सव नहीं है ? हम दोनों द्वारा पाले जानेवाले हमारी प्रेमकी कल्पलतिकाके लिए ये ही दोहदकी क्रियाएँ हैं न !' ।।२८।।

अपनी दोनों बाहुओंद्वारा तुम्हें आलिगनमें कस लेना चाहता हूँ,तुम्हारे चातुर्यके सामने हाथ जोड़ना चाहता हूँ,तुम्हारे नव्य अमृत वीक्षणोंको अपनी चितवनोंसे पीना चाहता हूँ,देहभर मानो नाक बना लिए हों तुम्हारे निश्वास सुगन्धका आनन्द लेना चाहता हूँ। तुम्हारे सौन्दर्यको प्रणाम है।'।।२९।।

'राग-रंजित मेरे मनोरत्नके इतने टुकड़े कर दिए न उन्हें तुम्हारे कण्ठका हार बना दूँ। मेरे हृदय प्रबन्ध (काव्य) को विशद रूपसे सुना दूँगा' ।।३०।।

हे मानिनी ! इन रागलताओंको पुष्पित करते, मनोरथोंको फलीभूत करते हुए, किनारों रूपी बन्धनोंको तोड़कर प्रवाहित होनेवाली इस ममता रूपी नदीमें ऐसी स्थितिमें अन्य बातोंकी हमें चिन्ता ही क्या ? ।।३१।।

भेदभावसे रहित प्रेममें प्रसन्न हो प्रेमसुधा पानरत हो रहेंगे। हे मनस्विनी ! अब लो पत्रभंगों* की रचना कर लो।' यह कहते हुए और प्रसन्न मुख हो सरस चित्तवाले नन्द मण्डनसाक्षीभूत उस दर्पणको हाथमें ले खड़ा हो गया।।३२।।

दर्पण हाथमें लिये खड़े प्रियतमके मुखको कभी-कभी देखते हुए अपने स्निग्ध कपोलोंपर विशेषकों (चित्रकों) की रचना कर लो, जिससे उसका मुख शैवालसे युक्त अब्ज-सा लसित हुआ ।।३३।।

---

*पत्र भंग—वे चित्र या रेखाएँ जो सौन्दर्य वृद्धिके लिए स्त्रियाँ कस्तूरी, केसर आदिके लेप अथवा सुनहले-रुपहले पत्तरोंके टुकड़ोंसे भाल, कपोल आदि पर बनाती हैं। माथे और गालपर की जानेवाली चित्रकारी अथवा बेलबूटे ।

उडुराजोपलघट्टनासुभगमै व्योमम्मु जुंबिचु मेल्
पडकिंटन् ललितोपभोगकलनापारीणुडै नंदुडा
पडतिन् गूडि यिटुन्नवेळ, बिलिचेन मध्यान्ह भिक्षार्थियै
गडपन् मेट्टिन गौतुमुंडु 'ममभिक्षांदेहि' यन् वाक्कुनन् ।।३४।।

अनुजन्मावसधंबटंचु मदिनेय्यंबूनुनो, लोनिकिन्
जनुनो, नेम्मोगमेत्ति कन्गोनुनो निस्संगुडु शाक्यर्षि नि
ल्चेनु दद्देहळि नन्यगेहमुलबोलेन् रेप्पपाटंत, पो
येनु दारिं बडि 'यस्ति नास्ति' यनु पल्केंदुन् विनन् रामिचेन्।।३५।।

अगरुगंदमुनु लोट्टुगपूर्लपिडितो
नलुगुलु नूरुनु जेलुव योर्तु,
नीहारवारि पन्नीरु साबाळ्ळुगा
नीराटकै कल्पु नेलत योर्तु,
कम्मकस्तूरिनि सांकवगंधमुनु गूर्चि
कलपम्मु मेंदिचु गलिकि योर्तु,
पच्चकप्पुरमु जापत्तिरि जेंचि त
म्मलपुजिल्कलु चुट्टु मेलतयोर्तु,
पूवुटेत्तलु ग्रुच्चु बूबोडि योर्तु
भर्तृकार्यार्थमटुनिटु बरचु नोर्तु
ऊडिगपुगान्तलिट्लु नियुक्तलगुट
नेवरु विदुरु बुद्धयोगींद्रु पिलुपु ? ।।३६।।

चेंगुचेंगुन बर्यायसेव कोरकु
नगरि कप्पुडु चनुदेंचु नाति योकते
यी चरित्रम्मु निटु वेलयिंपनुन्न
दैववशमुन मुनि निवर्तनमु गांचि ।।३७।।

'गडितपु जेट्टु पुट्टेगदे, कार्यनिमग्नत जेसि यिंटिलो
नुडिगपु जेडियल् कनगनोपरु गावलयुन्, महानुभा
वुडु चनुचुन्नवाडुरक, पूज्य निगर्हणनिंद स्वामि पै
बडुनो मरेमो ये देलिपिवच्चेदगा' कनि नन्दुचेंतकुन् ।।३८।।

चन्द्रकान्त शिलाओंसे विनिर्मित सुन्दर और आकाशको चूमनेवाले श्रेष्ठ शयनागारमें, ललित-उपभोग-कलना-पारीण बन नन्द उस युवतीके साथ रहा। ऐसे समय मध्यान्ह-भिक्षार्थी बन, दरवाजेपर आए गौतमने 'मम भिक्षां देहि' की आवाज लगाई ।।३४।।

सहोदरका महल है—तब भी वे शाक्य-ऋषि मनमें प्रेम मानकर, भीतर कैसे जाएँगे या सिर उठाकर भी कैसे देखेंगे। वे तो उस घरके सामने भी ठहरे, अन्य गृहोंके समान पलभर खड़े भी रहे और 'अस्ति-नास्ति' का जवाब न मिलनेपर, अपने रास्ते-चलते बने ।।३५।।

सुगन्धित तृणोंको लोध्र पुष्पोंसे मिला उबटन तैयार करनेवाली, एक ओसके पानी और गुलाब जलको सम भागोंमें जल क्रीड़ाओंके लिए मिलानेवाली, एक श्रेष्ठ कस्तूरी और जवादि को मिला सुगन्धित चन्दन तैयार करनेवाली, एक कर्पूर और जायफल मिला ताम्बूलके बीड़े तैयार करनेवाली, एक पुष्पमालाएँ बनानेवाली, एक प्रभुकार्यके लिए इधर-उधर भागनेवाली——इस प्रकार सभी दासियाँ काममें लगी हुई थीं, ऐसी स्थितिमें उस योगी बुद्धकी पुकार कौन सुनता है? ।।३६।।

उछलते-कूदते हुए उसी समय अपनी बारीपर सेवाके लिए नगरीमें आनेवाली एक दासीने, इस कथाको इस प्रकार गति देनेवाले मुनिका लौट जाना देख.........।।३७।।

'बड़ी बुरी बात हो गई है, शायद कार्यमग्नताके कारण किसी दासीने उन्हें देखा नहीं होगा। वे महानुभाव तो खाली हाथ लौटे जा रहे हैं, उस घटनासे पूज्यजनोंके तिरस्कारकी निन्दा मेरे स्वामीपर पड़ना सम्भव है, अतः इस बातकी सूचना तो यथास्थान समय रहते ही दे दी जानी चाहिए, यह सोचकर उसने नन्दके पास.........।।३८।।

चनि विन्नविंपगा, नि
ल्वुन नीरयि रासुतुंडु, पुल्कुपुलुकुनन्
दन प्राणकान्तमोमुनु
गनुगोनुचुन् बलिके निट्लु, कळवळपडुचुन् ।।३९।।

अन्नयटे, महामहिमुडट्टे, जगम्मुन वारलेंतयुन्
मन्ननसल्पुचुन् गुरुडु माकन दैवमुना जेलंगुलो
कोन्नतुडट्टे, यिट्लु निलयोपगतुंडयि, भिक्षवेडि, य
न्नन्न–मरेमनन्–मगिडेनट्टे, चेली ! कनु, ना यभाग्यतन् ।।४०।।

एन्तप्रमादमु पुट्टेन्
गान्ता ! नन्ननुमतिंपगदे, पूज्युडति
क्रान्तुडगुमुन्न चनि प्रा
र्थितुन् बादमुल व्रालि, तेच्चेदमगुडन् ।।४१।।

अनि सरसीजकल्पमगु नंजलि पट्टि यनुज्ञवेडु कां
तुनि गनि, वेच्चनूचि, नवतोयजचारुविलोचनम्मुलन्
दोन दोन बाष्पमुल् दोरग, दोय्यलि 'नन्नेडबासियेगेदे'
यनि मेयितीवतूल, ब्रियुनक्कुन व्रालि सगद्गदम्मुगन् ।।४२।।

'ना मनोनाथ ! ना निधानम्म ! नादु
कंठहारम्म ! ना कनुंगव वेलुंग !
गुरुचरणसेव गाविंप नरुगुनिन्नु
नेट्लु वारिंतु, गाक निन्नेट्लु पनुतु ? ।।४३।।

अनुकोननट्टि यी विरहमक्कट ! तारसिलेन् गदा ! प्रिया !
मनसु वशम्मुगाक पलुमारु ननर्थमु शंक जेसेडुन्,
जनि यटने विलंबनमु सल्पकुमा ! यिट नुन्नयट्ल ना
यनुग ! विशेषकम्मु तडियारकमुन् जनुदेरगावलेन् ।।४४।।

पलुकुबडि नितलो नेगिवच्चितेनि
विडनि गोवेंच्च कौगिलिविंदु, मुद्दु
दोंतरलु, दोंतरलमुद्दु—लितयेल
कानिपिंचेद ना यनुग्रहमहम्मु।' ।।४५।।

जाकर विनती की, तो इस बातको सुनकर राजकुमार विह्वल हो गए और अपनी प्रियतमाको देखते हुए, घबराए-से बोले...।।३९।।

'कैसा मेरा दुर्भाग्य है कि महामहिमावाले तथा सारे संसारसे आदर पानेवाले सारे लोगों द्वारा गुरु और दैववत् माने जानेवाले संसारके सर्वश्रेष्ठ मेरे ही बड़े भाई मेरे द्वारपर भिखमंगेके रूपमें आएँ और उन्हें खाली हाथ लौटना पड़े!' ।।४०।।

'हाय, कितनी भूल हुई? हे कान्ता! जानेकी अनुमति दो। उस पूज्यके दूर चले जानेसे पहले ही उनके पैरोंपर गिरकर प्रार्थना करूँगा और उन्हें लौटा लाऊँगा' ।।४१।।

यह कह सरसिज-समान अञ्जलि बाँध, अनुमति माँगनेवाले कान्तको देख, गरम आहें भर, नव जलजके सम चारु विलोचनोंसे टप्-टप् आँसू बहाते हुए वह 'हाय, मुझे छोड़ जाओगे?' कह काँपती हुई देह-लताकी भाँति प्रियकी गोदमें झुक पड़ी और गद्गद् स्वरमें बोली .....।।४२।।

'हे मेरे मनोनाथ! मेरे निधान! मेरे कण्ठहार! मेरे नेत्र-युग्मकी ज्योति! गुरुचरण सेवा करने जानेवाले तुम्हें कैसे रोकूँ और जाने भी कैसे दूँ?' ।।४३।।

हाय! अप्रत्याशित रूपसे यह विरह आ पड़ा। हे प्रिय! मन अवश होकर बार-बार अनर्थकी आशंका कर रहा है। जाकर वहीं विलम न जाना। हे मेरे प्रियतम! मेरे विशेषकके सूखनेसे पहले बस ऐसे लौट आना, जैसे यहीं हो!' ।।४४।।

मेरी बातोंके अनुरूप लौट आओगे तो अपने गाढ़ आलिंगनका सुख, चुम्बनोंकी बौछार—और न मालूम अपने मनके किन-किन मनोरम प्रेमपूर्ण भावोंको आपके सम्मुख व्यक्त करूँगी।।४५।।

अनि यनुरागलालनमु लारग, गूरिमि मेरयैन चं
दन घन सारगंधकलनाकमनीय दृढोपगूहबं
धनमेटुलेट्लो विप्पियुनु, दन्नेडवीडगलेक, वेणुनि
स्वन मधुरोक्ति वेडु चेलुवन् ब्रियुडल्लन बुज्जगिंचुचुन् ।।४६।।

'वलवनि जालि पूनि ननु वारणसेयकु, बेलवै कनुं
गोलुकुल नीरु निंपकदिगो ! गुरुदेवुडतिर्क्रमिंचेडुन्
जेलि ! कनुचूपुमेर, ननु जेच्चेर नंपिन दत्सपर्यलन्
सलिपि भवत्पदांबुरुहसन्निधिकिन् जनुदेंतु निंतलो।' ।।४७।।

अनुचु नूरार्चि, पत्रसमंचितमगु
नाननम्मुनु दडवि मुद्दाडि, राज
सातिरंजित चित्रांबराळितोड
नंदु डुन्नट्टुले पयनम्मुगाग ।।४८।।

निक्किन वीनुलुन्, जडतनेक्कोनु चूपुलु, विन्नबाटुनन्
स्रुक्किन मोमुनै परक त्रुंचक निल्चु कुरंगियो यनन्
जक्केर बोम्म यंत जलनम्मरुचूड्कुल ध्यानमग्नयै
चेक्किट जेयिचेंचि निलिचेन् बिकुबिक्कनि,कान्तुडेगगन्।।४९।।

बुद्धगतमैन पेनुभक्ति मुंदु लाग,
वैलदिपै रक्ति लागे वेन्वेनुक कतनि;
नूमिकल मध्य हंसना नोप्पेनपुड
निश्चयम्मुन गदलक निलुवकतडु ।।५०।।

एडयनि धर्मरागमेटुले नोक मुंदडुगेय, रेंडुमू
डडुगुल प्रेमधर्ममपुडातनि वेन्ककु, द्रोयु, नीगतिन्
विडुवक योय्यनोय्य बेनुवेल्लुवपै नेदुरेगुनट्टि य
य्युडुपमु वोले नेगे नेटुलो यडुगड्गुन वेन्कत्रोक्कुचुन् ।।५१।।

इटुलोककोंत येगि, तुदकेमनुनो गुरुडन्न भीति यो
क्कट, दडियारुनो मकरिकालत यन्न भयंबोकंट नु
त्कटमयि पैकोनंग वेसगाल्कोलदिन् जन जोच्चे दा हुटा
हुटि बेदपेट्ट यंगलिडि यूर्पुलु तोरमुलै चेलंगगन् ।।५२।।

———————

यह कहते हुए और चुमकारते हुए प्रेमकी सीमा रूपी चन्दन घनसार-गन्धकलना कमनीय दृढ़ उपगूह बन्धनको किसी भी तरह ढीला कर, अपनेको छोड़ न सकने, वेणु-निस्वन सम मधुर उक्तियोंमें विनती करनेवाली प्रियतमाको सान्त्वना देते हुए नन्दने कहा.....।।४६।।

'व्यथित बन मुझे जानेसे मत रोको, भोली बन आँसू मत भरो। वह देखो, गुरुदेव जा रहे हैं सखी! नजरोंसे ओझल होकर। मुझे तुरन्त जाने दो तो उनकी सेवा-शुश्रूषाएँ कर, तुम्हारे चरण कमलोंके पास अभी आ जाऊँगा।' ।।४७।।

यह कहते-कहते ढाढ़स बाँध, पत्र समञ्चित उसके मुखड़ेको चूम, नन्द अतिरञ्जित राजसी चित्राम्बरों (अनेक चित्रोंसे आकारित-आरेखित राजसी वस्त्रों) के साथ जैसे-का-तैसा निकल पड़ा, तो-- ।।४८।।

सावधान बने कान, जड़ बनी दृष्टि, उदास बना मुख, तिनका तक को न कुतर खड़ी हिरनीकी भाँति वह मधुर मूर्ति निश्चल नेत्रोंसे ध्यान-मग्न बन, कपोलोंपर हाथ धरे, खिन्न बन अपने कान्तको जाते देखती खड़ी रही। ।।४९।।

बुद्धगत उत्कट भक्ति उसे आगेको ढकेले, तो प्रियाका प्रेम पीछेकी ओर खींचने लगा। वह उर्मियोंके मध्य खड़े हंसके समान रह गया। वह अनिश्चयके कारण न तो वहीं खड़ा रह सका और न आगे ही बढ़ सका। ।।५०।।

धर्म-प्रेम उसे एक पग आगे बढ़ाए तो प्रेम-धर्म उसे दो-तीन कदम पीछे ढकेले। इस प्रकार प्रचण्ड बाढ़में विरुद्ध जानेवाली नौकाके समान किसी भी तरह कदम कदमपर पीछे हटते हुए, वह आगे बढ़ा। ।।५१।।

इस प्रकार थोड़ी दूर जाकर 'अन्तमें क्या होगा? क्या कहेगा गुरु?' इस बातका डर, दूसरी ओर कहीं मकरिका पत्र सूख न जाए--यह भय एक तरफ उत्कट होकर, मनको विवश बनानेपर, नन्द धड़ाधड़ लम्बे डग भरते हुए और लम्बी-लम्बी साँसें भरते हुए शीघ्र गतिसे जाने लगा।।५२।।

———